

卐 श्रीमद्राघवो विजयते 卐

धर्मचक्रवर्ती, महामहोपाध्याय, जीवनपर्यन्त कुलाधिपति, वाचस्पति, महाकवि
श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज
का राष्ट्रीय, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक चेतना का संवाहक

श्रीतुलसीपीठसौरभ

(मासिक पत्र)

सीतारामपदाम्बुजभक्तिं भारतभविष्यु जनतैक्यम्।
वितरतु दिशिदिशि शान्तिं श्रीतुलसीपीठसौरभं भव्यम्॥

वर्ष १४

जनवरी, २०११

अंक-०८

संस्थापक-संरक्षक

श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

संरक्षक

डॉ० कु० गीता देवी (पूज्या बुआ जी)

आद्य सम्पादक

आचार्य दिवाकर शर्मा ☎ 09971527545

सम्पादक

डॉ० सुरेन्द्र शर्मा 'सुशील' ☎ 09868932755

सहयोगी मण्डल

श्री ललिता प्रसाद बड़धवाल ☎ 09810949921

डॉ० श्रीमती वन्दना श्रीवास्तव, ☎ 09971149779

श्री सत्येन्द्र शर्मा एडवोकेट, ☎ 09810719379

श्री सर्वेश कुमार गर्ग, ☎ 09810025852

डॉ० देवकराम शर्मा, ☎ 09811032029

(ये सभी पद अवैतनिक हैं)

पूज्यपाद जगद्गुरु जी के सम्पर्क सूत्र :

श्रीतुलसीपीठ, आमोदवन,

● पो० नया गाँव श्रीचित्रकूटधाम (सतना) म०प्र० 485331

☎ 07670-265478

www.jagadgururambhadracharya.com

● वसिष्ठायनम् - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य मार्ग रानी गली नं०-1,
भूपतवाला, हरिद्वार (उत्तराखण्ड) दूरभाष-01334-218067

● श्री गीता ज्ञान मन्दिर भक्तिनगर सर्कल, राजकोट (गुजरात)
दूरभाष-0281-2364465

पंजीकृत सम्पादकीय कार्यालय एवं पत्र व्यवहार का पता
श्रीतुलसीपीठ सौरभ

डी-255 गोविन्दपुरम् गाजियाबाद (उ०प्र०) पिन-201013

दूरभाष-0120-2963031

ई०मेल-stspatrika@gmail.com

सदस्यता सहयोग राशि

संरक्षक 11,000/-

आजीवन 5,100/-

पन्द्रह वर्षीय 1,000/-

वार्षिक 100/-

रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले विषयानुक्रमणिका

| क्रम सं. | विषय | लेखक | पृष्ठ संख्या |
|----------|---|---------------------------------------|--------------|
| १. | सम्पादकीय | - | ३ |
| २. | श्रीमद्भगवद्गीता (१००) | पूज्यपाद जगद्गुरु जी | ४ |
| ३. | रासपञ्चाध्यायी विमर्श (१९) | पूज्यपाद जगद्गुरु जी | ६ |
| ४. | वैदिक हिन्दू संस्कृति दीपक (९) | पूज्यपाद जगद्गुरु जी | ८ |
| ५. | गायत्री मन्त्र की महत्ता का रहस्य | पूज्यपाद पं० दीनानाथ शास्त्री सारस्वत | १० |
| ६. | श्रीरामचरितमानस में चरित्र मर्यादा | पूज्यपाद जगद्गुरु जी | १२ |
| ७. | भारतीय संस्कृति की रक्षा करें | पूज्यपाद जगद्गुरु जी | २१ |
| ८. | पूज्यपाद जगद्गुरु जी के संकल्प साकार | डॉ० उन्मेष राघवीय | २२ |
| ९. | दिल्ली में दिव्यरामकथा | - | २६ |
| १०. | रामहिं केवल प्रेम पियारा | श्री उमाकान्त मालवीय | २७ |
| ११. | भगवान के वरदान हैं जगद्गुरु रामभद्राचार्य | मा० राजनाथ सिंह | ३० |
| १२. | पूज्यपाद जगद्गुरु जी के अगामी कार्यक्रम | प्रस्तुति-पूज्या बुआ जी | ३१ |
| १३. | व्रतोत्सवतिथिनिर्णयपत्रक | - | ३२ |

स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ० कुमारी गीता देवी प्रबन्ध्यासी द्वारा श्रीराघव प्रिंटर्स, जी-17 तिरुपति प्लाजा, बेगम पुल रोड, बच्चापार्क, मेरठ ;उ०प्र०, पफोन ;का०द्व 0121-4002639, मो०-9319974969, से मुद्रित कराकर कार्यालय डी-255 गोविन्दपुरम् गाजियाबाद (0120-2963031) से प्रकाशित किया गया।

पत्रिका के पाठकों से विनम्र निवेदन

श्रीतुलसीपीठसौरभ के सुधी पाठकों से विनम्र निवेदन है कि जिनकी वार्षिक सहयोग राशि १००=०० (एक सौ रुपये मात्र) पूर्ण हो चुकी है अथवा पूर्ण होने जा रही है वे निम्नलिखित पते पर कार्यालय को मनीआर्डर, बैंकड्राफ्ट अथवा नकद विधि से शीघ्रातिशीघ्र भेजने की कृपा करें अन्यथा हम पत्रिका नहीं भेज सकेंगे।

सम्पादक, श्री तुलसीपीठसौरभ

डी-२५५ गोविन्दपुरम् गाजियाबाद (उ०प्र०) पिन २०१०१३

सम्पादकीय-

हिन्दु जागरूक हो

प्राणिमात्र का भगवान् की शरणागति में पूर्ण अधिकार है। सभी प्राणी भगवान् की कृपा और योजना से संसार में आते हैं और अन्त में उन्हीं के चरणों में अथवा उन्हीं के द्वारा निर्मित लोकों में चले जाते हैं। इससे सिद्ध होता है कि सभी प्राणियों का अपना अस्तित्व कुछ नहीं है। केवल भगवान् के द्वारा दिए गए शरीर से सभी प्राणियों को भगवान् की ही प्राप्ति का पुरुषार्थ करना चाहिए। प्राणिमात्र के लिए यही वेदों का आदेश है, सन्तों का उपदेश है और जीवन का सन्देश है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भारतीय वाङ्मय में जितनी मौलिकता और गम्भीरता ऋषि महर्षियों के सनातन उपदेश में है उतनी विश्व के किसी देश के चिन्तकों के चिन्तन में नहीं है। यही कारण है कि सारा विश्व भारतोच्छिष्ट है। कहने के लिए तो सभी के कल्याण की चर्चा संसार के सभी धर्म-पन्थ-मजहब-रिलीजन करते हैं किन्तु व्यवहार में जितना वैदिक सनातन हिन्दू धर्म करता है उतना अन्य कोई नहीं। हिन्दू ने सभी के कल्याण के लिए भगवान् से प्रार्थना की-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥

सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु। सर्वः कामान् अवाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु॥

इन पंक्तियों में 'सर्व' पद का प्रयोग हिन्दु की अपनी मौलिक चिन्तन की अवधारणा तो है ही रचनात्मक धरातल की शोभा भी है। अन्य मतावलम्बियों ने जो कुछ अतीत में किया वह किसी राष्ट्रभक्त के लिए न तो आदर्श है और न ही उत्कृष्ट कहने लायक। हिन्दु ने जैसा कहा वैसा ही किया। अनेक युद्धों में हमारे हिन्दु वीरों ने शत्रुओं को अभयदान देकर रक्षा भी की। यद्यपि इस नीति से बहुत कुछ हानि भारत को आज भी झेलनी पड़ रही है। किन्तु विश्वमंच पर कथनी करनी एक रखने वालों में भारत ही आज भी अपना सर्वोपरि स्थान रखता है। क्या कहें किससे कहें भारत की अमूल्य निधि कहे जाने वाले अनेक श्रद्धा केन्द्रों के साथ छेड़छाड़ करने वाले जन्तुओं को शरण देकर हमने भयंकर ऐतिहासिक भूल की है। इस सत्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि भारत के मूल स्वरूप से सर्वथा अपरिचित तथाकथित राजनेताओं और सामाजिक उद्धारकों ने 'अहिंसा परमोधर्मः' जैसे उपदेशों की अनुचित व्याख्या प्रस्तुत की। जबकि जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज जो महानकोटि के राम एवं राष्ट्र भक्त हैं के अनुसार "अत्याचारिणां हिंसा अहिंसा" अर्थात् जो अत्याचारी बनकर हमारे भारत की सम्पदा को लूटेगा अथवा उसके विरुद्ध षड्यन्त्र रचेगा उसकी हिंसा को भी हम अहिंसा ही कहेंगे।" ये कौन सी उदारता हुई कि हम "सर्वे भद्राणि पश्यन्तु" का उद्घोष करने वालों के द्वारा अपनी विरासत में मिली सम्पदा को लुटते देखते रहें और अहिंसा परमो धर्म चिल्लाते रहें। यह कदापि सम्भव नहीं होगा कि हमारी उदारता को कायरता समझा जाए। हमारा मूलमन्त्र तो यह होना चाहिए-

भारत का सिंह नहीं छोड़ता किसी को स्वयं, छोड़ने पर शत्रु को वह छोड़ना न जानता।

यह सब स्पष्ट करने का उद्देश्य यह है कि हिन्दु के हितों की आज खुले आम हत्या हो रही है और सरकारी ताकतें तुष्टीकरणरूप ताड़का को पालपोष कर गृहयुद्ध की तैयारी में लगी हैं। आज जागना होगा युवापीढ़ी को और हुंकार भरकर ललकारना होगा उन दानवों को जो हमारा मित्र बनने का नाटक कर रहे हैं, हमारे हितैषी बनकर लूटमार करने वाली औद्योगिक कम्पनियों को भारत में भेज रहे हैं और भारत में ही रहकर भारत को गारत करने का षड्यन्त्र रच रहे हैं। भारत उन सभी का है जो इसे प्रेम करते हैं जो इसकी रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग करते हैं जो इसकी माटी से तिलक करते हैं, जिनको इसकी संस्कृति और सभ्यता पर गर्व है। साथ ही जो इसको परमवैभव के शिखर पर ले जाने के उद्यत भी हैं और उद्यम भी कर रहे हैं। भारत की रक्षा के लिए हम सबको एक होना चाहिए यही युगधर्म है। यही भारतभक्तानुमोदित सत्कर्म है। नमोराघवाय।

डॉ० सुरेन्द्र शर्मा 'सुशील'

सम्पादक

श्रीमद्भगवद्गीता (१००)

(गतांक से आगे)

(विशिष्टाद्वैतपरक श्रीराघवकृपाभाष्य)

भाष्यकार-धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

संगति- इस प्रकार आत्मानन्दप्राप्ति के पश्चात् योगी क्या प्राप्त करता है? इस पर भगवान् कहते हैं-

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते॥

६/२८

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! इस प्रकार जिसके पाप नष्ट हो गये हैं ऐसा योगी अपनी योगसाधना द्वारा मुझे सम्बद्ध करता हुआ, जिसमें ब्रह्म का संस्पर्श अर्थात् संयोग है ऐसे अत्यन्त अर्थात् अन्त से अतीत असीम सुख को बिना प्रयास के भोगता है।

व्याख्या- यहाँ भगवान् ऐसे सुख की व्याख्या कर रहे हैं जिसमें ब्रह्म का संस्पर्श है। अत्यन्तम् अतिक्रान्तम् अन्तम् अर्थात् योगी ऐसे सुख का उपयोग करता है जिसमें अन्त होता ही नहीं। ॥श्री॥

संगति- अब योगी का दर्शन कह रहे हैं-
सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥

६/२९

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! आत्मसंयमयोग से जिसका अन्तःकरण युक्त है तथा जो सर्वत्र समरूप से मुझ ब्रह्म का ही दर्शन करता है, ऐसा योगी मुझको सम्पूर्ण भूतों में स्थित देखता है और मुझमें सम्पूर्ण भूतों को देखता है।

व्याख्या- यहाँ 'आत्मानं' और 'आत्मनि' इन

दोनों स्थलों पर आत्म शब्द परमात्मा का ही वाचक है। अर्थात् योगी संसार में मुझे देखता है और मुझमें संसार देखता है। ॥श्री॥

संगति- अब भगवान् समदर्शन का फल कहते हैं-

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥

६/३०

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! जो साधक चराचर जगत् में मुझे देखता है और सम्पूर्ण चिदचिदात्मक जगत् मुझ परमात्मा में देखता है, मैं उसके लिए अदृश्य नहीं होता और वह मेरे लिए अदृश्य नहीं होता।

व्याख्या- यहाँ 'णस्' धातु अदर्शन अर्थ में है, विनाश अर्थ में नहीं। 'सर्वत्र' शब्द चिदचिदात्मक जगत् में प्रसिद्ध है। 'तस्य' और 'मे' इन दोनों शब्दों में सम्बन्धषष्ठी है। ॥श्री॥

संगति- भगवान् फिर उसी फल की व्याख्या कर रहे हैं-

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते॥

६/३१

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! जो योगी सेवकसेव्यभावसम्बन्ध का आश्रय करके अथवा अनन्य भक्ति से सम्पूर्ण भूतों में अन्तर्यामी रूप में स्थित मुझ परमात्मा को भजता है, वह योगी

शरीर से संसार में रहने के कारण स्थूल रूप से मेरे समीप न रहता हुआ भी सब प्रकार से मेरे समीप ही रहता है।

व्याख्या- 'एकत्व' का अर्थ सम्बन्ध है। एकत्व के सम्बन्धार्थक को गीता २/१२ में बहुत विस्तार से कहा जा चुका है। यद्वा एकत्व का अनन्यता भी अर्थ है। तृतीय चरण में सर्वथा अवर्तमानः यह पदच्छेद समझना चाहिए। 'मयि वर्तते' वह मेरे समीप ही रहता है। ॥श्री॥

संगति- अब भगवान् अत्यन्त रोचक होने के कारण बार-बार अभ्यास करने के लिए इस फलश्रुति का उपसंहार कर रहे हैं।

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः॥

६/३२

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! जो योगी सर्वत्र अपनी ही तुलना के द्वारा सुख और दुःख को समान देखता है, वह योगी परमपूज्य माना गया है।

व्याख्या- 'आत्मौपम्येन' का तात्पर्य है- उपमा एव औपम्यम् आत्मनः औपम्यम् आत्मौपम्यम् तेन यहाँ अभेद में तृतीया है। तात्पर्य यह है जैसे किसी की गाली अपने को अप्रिय लगती है उसी प्रकार यदि आप किसी को गाली देंगे तो उसे अप्रिय लगेगी। जिस व्यवहार से स्वयं को सुख होता है उससे दूसरों को भी सुख होगा। जो अपने लिए प्रतिकूल है वह दूसरे को प्रतिकूल होगा। इसीप्रकार जो सर्वत्र अपनी सदृश्य से सर्वत्र दुःख सुख की समानता देखता है वह योगी श्रेष्ठ है। इसी बात को वेदव्यास ने कहा है- 'श्रूयतां धर्मं सर्वस्व श्रुत्वा चैवावधार्यताम्' आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ॥श्री॥

संगति- अर्जुन प्रश्न करते हैं- प्रभो! इस मन को कैसे वश में किया जाय? अतः दो श्लोकों में मन के वशीकरण का उपाय जानने के लिए प्रभु से पार्थ ने पूछा?

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात्स्थितिं स्थिराम्॥

६/३३

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- अर्जुन जिज्ञासा करते हैं कि- हे मधुसूदन! आपके द्वारा कर्म संन्यास से अभिन्न जो यह योग कहा गया। इस योग की मैं चंचलता के कारण स्थिति को स्थिर नहीं देख रहा हूँ।

व्याख्या- आपने यह कहा कि- कर्मयोग और सांख्ययोग में कोई अन्तर नहीं है। इसलिए एक के करने से दोनों का फल मिल जाता है। परन्तु इस कर्मयोग की स्थिति स्थिर नहीं है। ॥श्री॥

संगति- भगवान् कहते हैं कि - तुम क्यों नहीं देख पा रहे हो? इस पर अर्जुन कहते हैं-

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥

६/३४

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे कृष्ण! यह मन बड़ा ही चंचल प्रमथनशील और अत्यन्त बलवान् है। इसलिए हे प्रभु! जिस प्रकार वायु का निग्रह कठिन है, उसी प्रकार मैं इसका भी निग्रह दुष्कर मानता हूँ।

व्याख्या- कर्षति जनानां मनः इति कृष्णः, आप भक्तों का मन खींचते हैं तो मेरा भी मन वश में कीजिये। क्योंकि इसे मैं नहीं पकड़ पा रहा हूँ। आपसे सम्भव है। ॥श्री॥

क्रमशः.....

(गतांक से आगे)

रासपञ्चाध्यायी विमर्श (१९)

□ धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

“चलो सखी तहँ जाइये जहाँ बसत ब्रजराज।
गोरस बेचत हरि मिलें एक पंथ दो काज।।”

वे गोरस बेचेंगी, पर किसको? संसार को बेचने का तात्पर्य है इसका मूल्य देना पड़ेगा। उनके गोरस का मूल्य तो श्रीकृष्ण ही दे सकते हैं संसार उसका मूल्य नहीं चुका सकता है। अतएव रसखान के शब्दों में गोरस बेचने वाली को देखकर कन्हैया ने कह दिया,

“आई हो आज नई ब्रज में दधि बेचन
जाओ तो जान न पाइहौ।
लइहाँ चुकाय सबै दिन की रसखान
भरी मन में पछितैहौ।।”

गोपी ने तुरन्त उत्तर दिया-

“आये तेरी न चेरी न तेरी बाबा की
तो क्यों मोहि घेर के पेरी लरइहौ।
जानते हो गोरस चाहो तो खा लो लला
पर ओरस चाहो तो जीति न पाइहौ।।”

गोपी से भगवान् गोरस लेंगे, विल्वमंगल स्वयं इस मंगल क्रीड़ा को देखकर प्रणाम करते हुए कह पड़े-

“विक्रेतुकामा किल गोपकन्या मुरारिपादार्पितचित्तवृत्तिः।
दध्यादिकं मोहवशादवोचद् गोविन्द दामोदर माधवेति।।”

तीन विशेषणों को देकर गोपियाँ कुछ कहना चाहती हैं, प्रभु! ले लीजिए ये गोरस ले लीजिए। यह तीन प्रकार का गोरस है प्रभु! संसार की दृष्टि से प्रवृत्ति का गोरस, ज्ञानियों की दृष्टि से निवृत्ति का

गोरस और वस्तुतस्तु भक्तों की दृष्टि और परमार्थ रूप में प्रपत्ति का गोरस। गोविन्द यदि हम आपको प्रवृत्ति का गोरस देना चाहते हैं तो लीजिए इसे निवृत्ति की ओर ले जाइये और यदि आप हमारा निवृत्ति का गोरस लेना चाहती हैं तो दामोदर ले लीजिए। जैसे सभी रस्सियों को आपने अपने पेट में बाँधा वैसे ही हमारे प्रवृत्तियों को ऊपर पेट में नहीं हृदय में ले जाइये और यदि प्रपत्ति का गोरस है तो माधव! आप माधव हैं, यह प्रपत्ति का गोरस है इसे ले करके आस्वाद लीजिए। अस्तु गोपियों ने प्रभु की आज्ञा मानी।

ततो जलाशयात् सर्वा दारिकाः शीतवेपिताः।
पाणिभ्यां योनिमाच्छाद्य प्रोत्तेरुः शीतकर्षिताः।।

भा० १०/२२/१७

भगवान् वेदव्यास जी कहते हैं, भगवान् श्रीकृष्ण की आज्ञा मानकर गोपियाँ शीत से काँप रही हैं “वेपिताः” काँप रही हैं अथवा काँप गई। गोपियाँ क्यों काँपी भगवान् की कृपा तथा अपनी तुच्छता पर काँपी। अरे! इतने बड़े कृपालु प्रभु मुझे बुला रहे हैं अपने पास, मैंने क्या किया है? इस जीवन में कभी-कभी भगवान् की कृपालुता पर भक्त काँप जाता है। जैसे श्रीरामचरितमानस में अत्रि ने भगवान् के साक्षात् दर्शन किये तो बोल पड़े-

तन पुलक निर्भर प्रेम पूरन नयन मुख पंकज दिये।
मन ज्ञान गुन गोतीत प्रभु में दीख जप तप का किये।।

मानस ३/६/११

हमने कौन सा जप-तप किया था जो परमात्मा के दर्शन कर रहे हैं? ये परमात्मा की अहैतुकी कृपा

है हमने कुछ नहीं किया है। इसी प्रकार आज कृष्णचन्द्र, ब्रजेन्द्रनन्दन, श्रीशिखिपिच्छमौलि, रसिकशेखर की इस सहजता और सरलता को देखकर गोपियाँ उनकी कृपालुता पर काँप गई और “पाणिभ्यां योनिमाच्छाद्य” और यह शब्द भी बहुत मार्मिक है और दुर्भाग्य है कि इन तीन शब्द को न जानने से सनातन धर्म के सम्बन्ध में बहुत से बवण्डर उठे और आदरणीय पूर्व टीकाकारों ने भी इन शब्दों के साथ न्याय नहीं बरता। क्योंकि व्यक्ति तो व्यक्ति है, मनुष्य निरन्तर अपने स्तर से ही सोचा करता है। उसकी सोच के लिए उसकी एक निश्चित सीमा होती है। उसकी सीमा दूसरा कोई नहीं बनाने आता है उसकी वासना ही उसकी सीमाओं का निर्धारण कर लेती है। मनुष्य जिस परिवेश में जीता है उसी परिवेश के अनुसार सीमाओं का निर्धारण कर लेता है। यहाँ ‘योनि’ शब्द कोई अपवित्र नहीं है, चूँकि जीव भोगवादी है, इसलिए योनि का प्रथम अर्थ उसने स्वीकार कर लिया स्मरागार अर्थ, परन्तु योनि के और भी तो अर्थ हैं। “योनि स्मरागारे जातावाकरजन्मनोः” ‘योनि’ शब्द जाति, आकर और जन्म अर्थ में भी है। यह मैं पूर्ण आत्मविश्वास से निवेदन कर रहा हूँ कि यहाँ प्रयुक्त ‘योनि’ शब्द आकर और जन्मस्थान अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। “पाणिभ्यां योनिमाच्छाद्य” और यहाँ ‘पाणि’ शब्द भी बहुत महत्वपूर्ण है। पाणि और हस्त इन दोनों शब्दों में शास्त्रकारों ने बहुत अन्तर माना है। हाँ इनको देखने की आवश्यकता है ‘पाणि’ शब्द किसे कहते हैं और ‘हस्त’ किसे कहते हैं इस पर शास्त्र ने एक व्यवस्था दी है। भगवान् पाणिनि भी पाँचवें अध्याय के दूसरे पाद में हस्त शब्द का प्रयोग करते हुए कहते हैं कि “हस्ताज्जातौ” (पा० अ० ५/२/१३३) ‘हस्त’ शब्द से जाति अर्थ में ‘इनि’ प्रत्यय होकर हस्ती

बनता है। हस्त एक वस्तु के ग्रहण का साधन है, वो मनुष्य के हाथ के लिए प्रयुक्त होता है और हाथी के सूँड़ के लिए भी प्रयुक्त होता है, इसीलिए तो इसे हस्ती भी कहते हैं। वही हाथ यदि मनुष्य के पास होगा तो उसे हस्तवान् कहते हैं, परन्तु ‘पाणि’ शब्द जो है वह केवल मनुष्य के लिए प्रयुक्त होता है और उसकी व्यवस्था है, “पाणिर्ज्ञेयं तदेवांगं आस्कन्धं मध्यमांगुलेः” कन्धे से लेकर मध्यमा अंगुलि तक के अवयवों को पाणि कहते हैं और हाथ “अरत्नेश्च समारभ्य यावच्च मध्यमांगुलेः” केहुनी से लेकर मध्यमा अंगुलिपर्यन्त भाग को हस्त कहते हैं, इसीलिए कोई वस्तु जब नापी जाती है तो हाथ से नापी जाती है पाणि से नहीं। अतः गोपियों ने अपनी योनि अर्थात् भावों की खानिरूप हृदय को अपनी पाणियों से ढँक लिया अर्थात् उस अंग का प्रयोग किया जो समग्र रूप से हृदय को चिपक सके। आज जब बहुत ठंडी लगती है जब बहुत शीत का प्रकोप बढ़ जाता है तो व्यक्ति अपने हृदय को बचाने के लिए दोनों हाथों को अर्थात् स्कन्ध से लेकर अंगुलिपर्यन्त दोनों हाथों का एक साथ प्रयोग करता है और यों वक्ष के दोनों भागों को अपने दोनों पाणियों से ढँक लेता है। वहाँ हाथ का प्रयोग नहीं होता पाणि का प्रयोग होता है। “पाणौ महासायकचारुचापं” पाणि उस अंग को कहते हैं जहाँ पर स्कन्ध से लेकर अंगुलि तक सम्पूर्ण अंगों का प्रयोग हो रहा हो। भोजन करते समय हाथ का प्रयोग होता है पाणि का नहीं, परन्तु धनुष चलाते समय पाणि का प्रयोग होता है इसलिए “पाणौ महासायकचारुचापं” इसी पाणि का पर्याय भुजा है, पाणि, भुजा, बाहु। किन्तु पाणि को हाथ नहीं कह सकते। पाणि एक व्यापक है और हस्त एक व्याप्य अंग है। इसलिए दोनों पाणियों से गोपियों ने योनि अर्थात् भावों की खानिरूप अपने हृदय को ढँक लिया।
क्रमशः.....

गतांक से आगे-

वैदिक हिन्दू संस्कृति दीपक (१)

□ धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

“पुष्पमालां समर्पयामि साम्बसदाशिवाय नमः”

बिल्वपनमन्त्र : ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने
च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च
श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च॥

(शु०य० १६-३५)

अर्थ-दिव्य शिरस्त्राण धारण करने वाले
अलौकिक कवच से युक्त भगवान् शिव को नमस्कार
हो, नमस्कार हो। छाती पर लौह निर्मित टोप धारण
करने वाले एवं हाथी के आकार के रथगुप्ति से युक्त
भगवान् शिव को नमस्कार हो नमस्कार हो-
परमप्रसिद्ध एवं प्रसिद्ध सेना वाले भगवान् शिव को
नमस्कार हो नमस्कार हो। दुन्दुभी और ढोल से प्रसन्न
होने वाले भगवान् शिव को नमस्कार हो-नमस्कार
हो।

“बिल्वपत्रं समर्पयामि साम्बसदाशिवाय नमः”

धूप मन्त्र : या ते हेतिर्मिदुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः।
तयाऽस्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज॥

(शु०य० १६-११)

अर्थ-हे मेघ की भाँति समस्त कामनाओं का
वर्षण करने वाले भगवान् शिव, आपके श्रीहस्त में
जो पिनाक नाम का धनुष शस्त्र है उसी उपद्रव रहित
धनुष से आप हमारा चारों ओर से पालन करें।

“धूपं समर्पयामि साम्बसदाशिवाय नमः”

दीपमन्त्र : परिते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः।

अथो य इषुधिस्तवारे अस्मन्निधेहि तम्॥

(शु०य० १६-१२)

अर्थ-हे भूतभावन! आपका जो धनुष संबंधी
शस्त्र अर्थात् बाण है, वह हमको छोड़ दे अर्थात् हमें
न मारे इसके अनन्तर आपका जो तरकस है उसे भी
आप हमसे बहुत दूर रखें। यहाँ आर शब्द दूर का
वाचक है।

“दीपं दर्शयामि साम्बसदाशिवाय नमः”

नैवेद्यमन्त्र : अवतत्य धनुष्टवम् सहस्राक्ष शतेषुधे।

निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव॥

(शु०य० १६-१३)

अर्थ-हे अनन्त नेत्रों वाले, अनेक तरकसों वाले
सदाशिव आप अपनी धनुष की डोरी उतारकर तथा
अपने बाणों के नुकीले अग्र भागों को तोड़कर हमारे
लिये कल्याणकारी और अनुग्रहपूर्ण मनवाले हो जाएँ
अर्थात् कृपा करें।

“नैवेद्यं निवेदयामि साम्बसदाशिवाय नमः”

ताम्बूल-नमस्त आयुधायानातताय धृष्णवे।

उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने॥

(शु०य० १६-१४)

अर्थ-हे रुद्रदेव! शत्रुओं के विनाश में प्रगल्भ
और धनुष पर न चढ़े हुए आपके बाण को नमस्कार
हो। आपकी दोनों भुजाओं को नमस्कार हो, और
उतरी हुई प्रत्यञ्चा वाले आपके धनुष को नमस्कार
हो

“ताम्बूलं समर्पयामि साम्बसदाशिवाय नमः”

प्रदक्षिणा : मानो महान्तमुत मा नो अर्भकं

मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम्। मा नो वधीः

पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः।

(शु०यजु० १६-१५)

अर्थ-हे रुद्रदेवता आप हमारे किसी वृद्ध को न मारें और बालक को न मारें, हमारे परिवार के किसी युवक को भी न मारें और गर्भस्थ शावक को भी न मारें आप हमारे माता पिता को न मारें और आप हमारे पत्नी तथा पुत्र पौत्र को न मारें अर्थात् सभी के मन में शिव संकल्प हों, क्योंकि संकल्प का अभाव ही मृत्यु है॥

“प्रदक्षिणां समर्पयामि साम्बसदाशिवाय नमः”

पुष्पाञ्जलि मन्त्रः ॐ मा नस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः।
मा नो वीरान् रुद्र भामिनो
वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे॥

(शु०य० १६-१६)

अर्थ-हे रुद्रदेव, आप हमारे पुत्र पौत्र के आयु की हिंसा न करें अर्थात् इनमें शिव संकल्प यथावत् बना रहे, आप हमारी गौओं और घोड़ों की हिंसा न करें। अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करते हुये अत्याचारियों के प्रति क्रुद्ध हमारे वीर सैनिकों का आप वध न करें। अर्थात् आपकी कृपा से हमारे वीर सैनिक राष्ट्र की सीमाओं की रक्षा करते रहें। हम भक्तजन हवि से युक्त होकर यज्ञों में आपका सदैव आह्वान कर रहे हैं।
“साम्बसदाशिवाय नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि”
प्रार्थना-यदक्षरपदभृष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद पार्वतीश्वर॥

भगवान् साम्बसदाशिव की जय।

इसी प्रकार भगवान् सूर्य का भी पुरुष सूक्त से षोडशोपचार पूजन करना चाहिये। शालग्राम की पूजा का भी यही क्रम है। परन्तु भगवान् शालग्राम की नित्य प्रतिष्ठा है और वे नित्य आवाहित हैं, इसीलिये सुन्दर ताम्रपात में खुदवाकर यन्त्र बनवा लेना चाहिये अथवा चन्दन से श्रीराम मन्त्र या गुरुदेव से प्राप्त

किसी भी वैष्णव मन्त्र का यन्त्र बना लेना चाहिये। ध्यान रहे कि दश वस्तुओं को मिलाकर ही बनाया हुआ चरणोदक पान करने मात्र से भयंकर से भयंकर कष्ट नष्ट कर देता है। भगवान् शालग्राम को शंख से स्नान कराते हुए, बायें हाथ से घंटे बजाते हुए पुरुष सूक्त के सोलहों मन्त्र सस्नेह पढ़ना चाहिये। चरणोदक में उपयुक्त होने वाली दस (१०) वस्तुएँ निम्न प्रकार से हैं (१) पवित्र नदियों या कूप का जल अथवा शुद्धजल। (२) ताम्रपात्र (३) यन्त्र (४) पुरुषसूक्त अथवा गुरुमन्त्र, (५) तुलसीदल (६) मलयगिरि चन्दन (६) घण्टीनाद (८) शंख (९) गोमती चक्र सहित, (१०) शालग्रामशिला।

इसका संग्रह श्लोक इस प्रकार है-

ताम्रपात्र जलं शुद्धं यन्त्रोमन्त्रस्तथैव च।
तुलसीदलमित्येव मलयं चन्दनं तथा॥
घण्टानादश्च शंखश्च शालग्रामशिला तथा।
गोमतीचक्रमित्येभिर्दशभिश्चरणोदकम्॥

यह ध्यान रहे कि जब भी पूर्वोक्त दश वस्तुओं के अतिरिक्त इसमें जो भी डाला जाएगा तब इसका चरणोदकत्व नष्ट हो जायेगा। इसलिये प्रथम तो पूर्वोक्त विधान से पुरुष सूक्त के सोलह मन्त्रों से भगवान् शालग्राम में श्रीसीताराम अथवा श्रीराधाकृष्ण अथवा श्रीलक्ष्मीनारायण की भावना करते हुए, उनका शंख से अभिषेक करके चरणोदक ताम्रपात्र से पृथक् किसी शुद्ध पात्र में रख लेना चाहिये फिर भगवान् का पञ्चामृत से अमृताभिषेक करना चाहिये, प्रथम दूध, दही, घी, मधु, और शक्कर इन पांचों वस्तुओं से उनके मंत्र पढ़कर पृथक्-पृथक् अभिषेक करना चाहिये इसके अनन्तर इन पांचों को एक में मिलाकर एकतन्त्र पञ्चामृताभिषेक करना चाहिये। अब प्रत्येक अभिषेक के अलग अलग अर्थसहित मन्त्र दिये जा रहे हैं-

क्रमशः.....

गतांक से आगे-

गायत्रीमन्त्र की महत्ता का रहस्य

□ पूज्यपाद पं० दीनानाथ शास्त्री सारस्वत 'विद्यावागीश'

वार्तमानिक विज्ञान भी इस सिद्धान्त की पुष्टि करता है। वैज्ञानिकों ने रेडियम धातु की विद्युत्कणिका का परीक्षण करके यह ज्ञान प्राप्त किया है कि 'रेडियम' धातु के एक परमाणु से हजारों विद्युत्-कणिका प्रतिक्षण में प्रकट होती हैं। परिमाण में वे कण इतने छोटे होते हैं कि एक हजार भी मिले हुए उनका संयुक्त-परिमाण वा गुरुत्व 'हाईड्रोजन' के एक परमाणु के तुल्य भी नहीं होता। इनके निकलने का वेग प्रकाश के वेग का लगभग दो-तिहाई होता है। प्रकाश का वेग एक सेकंड में १,८६,००० मील के लगभग सिद्ध किया गया है। सूर्य से लगभग साढ़े नौ करोड़ मील की दूरी पर स्थित पृथ्वी पर उसका प्रकाश आठ मिनट में पहुँचता है।

इन अपूर्व बातों को देखकर वैज्ञानिकों की यह धारणा हो गई है कि समस्त चराचर जगत् में सारभूत वस्तु कोई भी नहीं है और संसार में कोई भी पदार्थ जड़ नहीं है। जड़ कहे जाने वाले पदार्थों के छोटे से छोटे कण अर्थात् परमाणु को देखने से तथा उसे तोड़कर उसके सहस्रों भाग करने पर विद्युत्कणियों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं मिलता। फिर भी उनकी सत्ता दिखाई पड़ती है और नियम से प्रतिक्षण उनकी चलन-प्रवृत्ति मिलती है; इससे वर्तमान वैज्ञानिकों के विचार में जड़ वस्तुओं में भी दैवी शक्ति का आभास दीखने से जड़ों में भी चेतन-सत्ता सिद्ध हुई।

वस्तुतः यह सिद्धान्त है भी ठीक ही। शास्त्र का भी यही सिद्धान्त है। शास्त्र परमात्मा को अणु-अणु

में व्याप्त मानता है। अद्वैतसिद्धान्त में तो अणु-अणु भी परमात्मा ही रूप है अथवा परमात्मा ही है। उस (परमात्मा) से भिन्न किसी भी वस्तु की पारमार्थिक सत्ता नहीं है। ईश्वर 'सच्चिदानन्द' इस शब्द से चेतन ही हैं; तो सांसारिक वस्तुएँ जड़ दीख रही हुई भी वस्तुतः चेतन ही हैं। जो कि उनमें स्थूलता से चैतन्य की अभिव्यक्ति नहीं दीखती; उसमें कारण है उनमें स्थूलता से इन्द्रियों तथा मन की अनभिव्यक्ति। आत्मा को ही देख लीजिये, वह चेतन है। जब उसमें मरण के समय इन्द्रियाँ और मन अभिव्यक्त नहीं होते; तब वह आत्मा भी चेष्टाशाली नहीं मालूम होता। प्रत्युत आत्मा के शरीर में विद्यमान होने पर भी, उसमें होती हुई भी इन्द्रियाँ कारणवश कार्य करने वाली नहीं होती, वा निर्बल हो जाती हैं; तब आत्म युक्त शरीर वाले होने पर भी पुरुष की चेष्टा नहीं दीखती। इस विषय में मूर्च्छित (बेहोश) पुरुषों का उदाहरण देख लीजिये। अथवा न मूर्च्छित भी निर्बल-इन्द्रिय शक्ति वाले, वा लकवा बीमारी से घिरे पुरुषों का उदाहरण देख लीजिये। परमात्मा चेतन माना जाता है, पर उसमें 'हरकत' क्यों नहीं दीखती? उसमें भी कारण है उसका स्थूल इन्द्रिय-मन आदि से असंयोग। इसीलिए उसके शब्द आदि व्यवहार भी स्थूल नहीं हुआ करते।

इससे सिद्ध हुआ कि-जड़ वस्तु भी वास्तव में चेतन हुआ करती है। भैंस की पुरीष के जड़ परमाणुओं में जब स्थूलता से विशिष्ट शक्ति का संयोग व्यक्त होता है; तब उसके पुरीष के कीड़े हो जाते हैं। यदि जड़ों में चेतन-शक्ति सर्वथा न होती; तो अभाव से

भाव की उत्पत्ति कैसे हो गई? जो चैतन्य-शक्ति कीड़ों में है, वह भैंस की पुरीष के जड़ कहे जाने वाले परमाणुओं में भी थी। परन्तु इन्द्रियादि की अभिव्यक्ति न होने से वह चैतन्य-शक्ति अपना उपयोग न कर सकी। बल्ब न होने पर बिजली नहीं जला करती। इसी सिद्धान्त को मानकर स्वर्गीय जगदीशचन्द्र वसु ने वृक्षों में चेतनता मानी थी; इसी प्रकार पत्थरों में भी मानी। इसी अभिप्राय से वर्तमान वैज्ञानिक लोग सूर्य में भी प्रसन्नता-अप्रसन्नता के परमाणु मानने लगे हैं।

बुद्धि के अधिष्ठाता देव सूर्य हैं

इसका विवरण इस प्रकार है। कैम्ब्रिज-यूनिवर्सिटी लन्दन में सूर्य के विषय में एक लैक्चर हुआ था; जो समाचार-पत्रों में प्रकाशित हो चुका है। उसको तो हम फिर अन्य पुष्पों में पाठकों को उपहृत करेंगे। उसमें प्रकृत अंश यह है। उस व्याख्याता ने कहा- 'उत्तरी अमेरिका के ग्रेनलैण्ड प्रदेश में एक दफीने का खोदना शुरु हुआ। खोदने पर दफीना (माणिक्य) तो मिला नहीं, किन्तु एक देवमन्दिर मिला। उसमें सूर्य की एक मूर्ति है, जो चमकदार पत्थरों से बनाई हुई है। सूर्य के सामने एक हिन्दु डण्डे की तरह झुककर प्रणाम कर रहा है। सामने ही अग्नि में धुवाँ उठ रहा है, जिससे मालूम होता है कि-अग्नि में कुछ सुगन्धित द्रव्य डाला गया है। इधर-उधर फूल पड़े हैं। यह सब दृश्य पत्थरों से बनाया गया है।

इस विचित्र सूर्य-मन्दिर मिलने से मालूम हुआ कि-किसी युग में हिन्दुओं का चक्रवर्ती राज्य अमेरिका तक फैला था। इसके अतिरिक्त यह भी मालूम हुआ कि-हिन्दुओं का विश्वास था कि-सूर्य प्रसन्न तथा क्रुद्ध भी हो सकता है। यदि ऐसा विचार

न होता; तो एक हिन्दु उस (सूर्य) की पूजा क्यों करता? क्यों उसे नमस्कार करता? इस विषय को लेकर वैज्ञानिक-संसार में क्रान्ति उत्पन्न हो गई। मिस्टर जार्ज नामक किसी विज्ञान के प्रोफेसर ने यह परीक्षा की कि-सूर्य में कृपाशक्ति है या नहीं? हम सूर्य में समस्त तत्त्वों की सत्ता तो मानते रहे; पर यह कल्पना भी नहीं कर सके कि सूर्य में प्रसन्नता अप्रसन्नता का तत्त्व भी विद्यमान है। हिन्दुओं की सूर्य-पूजा का वृत्त भारतीय प्राचीन इतिहास से हमें पहले ही पता था। अमेरिका में मिले सूर्य-मन्दिर में हमें हिन्दुओं की सूर्य-पूजा में अन्य भी निश्चय हो गया। मि० जार्ज ने सोचा कि-हिन्दुओं की सूर्योपासना क्या मूर्खतापूर्ण थी वा वास्तविकतापूर्ण?

इसकी रोचक परीक्षा हुई। मई का महीना था। पूरे दोपहर के समय केवल पाजामा पहनकर मि० जार्ज नंगे शरीर धूप में ठहरे। पाँच मिनट सूर्य के सामने ठहरकर वे कमरे में गये। थर्मामीटर से उन्होंने अपना तापमान देखा। तीन डिग्री तक बुखार चढ़ा था। दूसरे दिन उक्त महाशय ने फूल-फलों का उपहार तैयार किया। अग्नि में धूप जलाया। तब वह पूरे दोपहर में नंगे शरीर धूप में गया। उसने सूर्य के सामने श्रद्धा से फूल चढ़ाये, फल भी। हाथ जोड़कर प्रणाम किया। जब वह अपने कमरे में गया; तो घड़ी में उसने देखा कि- आज वह ग्यारह मिनट तक सूर्य के सामने रहा। थर्मामीटर से मालूम हुआ कि -आज उसका तापमान नार्मल रहा। उसका पारा ठण्डक की ओर रहा।

इससे उसने यह परिणाम निकाला कि वैज्ञानिकों का "सूर्य केवल अग्नि का गोला और जड़ है" यह सिद्धान्त गलत है, वस्तुतः उसमें अप्रसन्नता तत्त्व भी विद्यमान है।" क्रमशः.....

मर्यादा ३

श्रीरामचरितमानस में चरित्र मर्यादा

□ धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

श्रीराम जय राम जय जय राम
श्रीराम जय राम जय जय राम
कौसल्या गर्भसिन्धुवन्दुं मर्यादापुरुषोत्तमम्।
रामं सम्पुष्टमर्यादं स्तुवे चारित्र्यवत्सलम्।
अभियुक्तों ने बहुत उचित ही कहा है कि-
सूर अनेक फिरैं कण माँगत
पै वह सूर सा स्वाद कहाँ।
बहु झाँझ मँजीरे बजाती फिरैं
मतवाली पै मीरा सी याद कहाँ।
नरसिंह बसैं सब के घट में
उन्हें काढिबे को प्रह्लाद कहाँ
रघुनाथ कथा बहुतों ने लिखी
पै तुलसी जैसी मरजाद कहाँ।

विगत अंकों में आप पढ़ चुके हैं कि श्रीरामचरितमानस वैदिक मर्यादावतार ही हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में हम दो मर्यादाओं की ओर आपका ध्यान आकृष्ट कर चुके हैं। अब तृतीय धारावाहिक में आप पढ़ेंगे श्रीरामचरितमानस में चरित्र मर्यादा। चरित्र शब्द भारतीय संस्कृति का एक ऐसा शब्द है जिसके श्रवणमात्र से पौरस्त्य और प्रतीच्य विद्युत् पल्लव सलज्ज सश्रद्ध होकर मूर्धावनत हो जाते हैं। स्वयं आदि कवि महर्षि प्राचेतस वाल्मीकि नारद जी से उस पुरुष की जिज्ञासा करते हैं जो चरित्र से युक्त हो-

चारित्र्येण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः।

स्वयं वाल्मीकि जी अपनी रामायण के अयोध्याकाण्ड में श्रीराम को चारित्र्यवत्सल कहते हैं-

पदभ्यामेव जगामाशु रामः चारित्र्यवत्सलः।

अर्थात् वे श्रीराम प्रभु को भक्तवत्सल, भत्यवत्सल, भ्रातृवत्सल, मित्रवत्सल यहाँ तक कि 'रिपूणामीय वत्सलः' कहते हैं किन्तु 'चारित्र्यवत्सल' एक विचित्र संयोग और विचित्र सम्बोधन है। अर्थात् जिनका चारित्र्य पर वात्सल्य है। जो चरित्र को अपने औरस्त्य से न्यून नहीं मानते। श्रीराम को तो सभी लोग चरित्रवत्सल के रूप में स्वीकारते हैं परन्तु आज इस लेख में हम आप श्रीरामचरितमानस के प्रत्येक पात्र के चरित्र का सिंहावलोकन कर सकते हैं। मैं यहाँ यह कहने में किसी प्रकार का संकोच नहीं कर रहा हूँ कि श्रीरामचरितमानस का कोई भी ऐसा वर्ण्य पात्र नहीं है जो अपने चरित्र की मर्यादा को छोड़ रहा हो। प्रत्येक का जो चरित्र होना चाहिए उस चरित्र की उसी मर्यादा में वह बद्ध रहता है। यही इस ग्रन्थ का एक अननुकरणीय अविस्मरणीय एवं सर्वथा अनुपमेय औचित्य और उत्स है। श्रीराम-चरितमानस क्योंकि चरित्र से ही प्रारम्भ होता है और चरित तथा चरित्र में गोस्वामी जी ने किसी प्रकार का अन्तर नहीं माना है। अधिक विचार करने पर कुछ सूक्ष्मताओं के दर्शन होते हैं दोनों के विविध प्रतिष्ठापना में। चरित और चरित्र प्रायः एक से लगते हैं। चरित का अर्थ है आचरित आदर्शपूर्वक निष्पादित कार्य और चरित्र का अर्थ होता है कार्य निष्पादन का अलौकिक आदर्श। श्रीराम स्वयं तो आदर्शमय हैं ही पर उनके साथ जो भी पात्र जुड़ा है उसका अपना चरित्र है। वे अपनी लीला में चरित्रहीन को स्थान देते ही नहीं। यहाँ चरित शब्द व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। अद्यतन चिन्तन में सामान्य लोग शारीरिक चरित को ही चरित्र मानते हैं जबकि भारतीय

संस्कृति में ऐसा नहीं है। भारतीय संस्कृति मानव के उस उदात्त गुण को चरित्र संज्ञा से विभूषित करती है जिसके आधार पर ही मनुष्य दानवता का निरसन करते हुए दैवी सम्पत्ति को प्राप्त होकर सर्वथा अमरत्व को प्राप्त कर लेता है। चरित्र शब्द चर् धातु से करण में इत्र प्रत्यय करके निष्पन्न हुआ है। महर्षि पाणिनि ३/२/१८४ सूत्र में स्वयं कहते हैं 'अर्ति-लू-धू-सू-खन-सह-चर-इत्रः' अर्थात् इस सूत्र में परिगणित अर्ति-लू-धू-सू-खन-सह-चर् धातु से करण में इत्र प्रत्यय होता है। इस शब्द की निष्पत्ति होती है चर्यते सम्यक् निष्पाद्यते गम्यते वा जनैः येन तत् चरित्रम् अर्थात् जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी गतिशीलता को अक्षुण्ण रखता है उसे चरित्र कहते हैं। पाणिनि ने चर् धातु गति और भक्षण ये दो अर्थ माने हैं। भक्षण अर्थ मान लेने पर इसकी निष्पत्ति होगी चर्यन्ते अनर्थाः भक्ष्यन्ते येन तत् चरित्रम्। अर्थात् जिसके द्वारा मानव के जीवन में आपतित मानव मर्यादा के विघातक अनर्थों का निरसन हो जाता है उस विशिष्ट गुण को चरित्र कहते हैं। कदाचित् महर्षि वाल्मीकि इसी चरित्र को अपनी जिज्ञासा के स्वर में श्रीनारद को सम्बोधित करके पूछ लेते हैं कि-

“चारित्र्येण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः।”

इस श्लोक खण्ड का सीधा सा अर्थ यह है कि जो चरित्र से युक्त होता है वही सम्पूर्ण भूतों का हितैषी हो सकता है। चरित्रहीन व्यक्ति कभी किसी का हित नहीं कर सकता। रामचरितमानस के वर्णनों में दो प्रकार के लील सहकर्मी दृष्टिगोचर होते हैं एक सकारात्मक और दूसरे नकारात्मक। किन्तु दोनों ही अपनी चरित्रमर्यादा में बँधे रहते हैं। वे किसी भी परिस्थिति में अपने चरित्र की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते। कदाचित् मर्यादा शब्द मूल्य शब्द की अर्थवत्ता से सम्पृक्त हुआ सा दृष्टिगोचर होता है।

प्रत्येक पात्र अपने मूल्यों की रक्षा करने में इतना सजग और सतर्क दिखता है जिसे देखकर मन एक आश्चर्य समन्वित भावना से आकृष्ट हो जाता है। जहाँ श्रीराम स्वयं चरित्रमूर्ति और उनकी अन्तरंग अभिन्न लीला सहकर्मिणी जनकनन्दिनी भगवती सीता स्वयं सतीशिरोमणि अर्थात् जिनका स्मरण करने मात्र से व्यक्ति चरित्रवत्ता का आसंजन कर लेता है उसी प्रकार उनके उदात्तगुण सम्पन्न भ्राता भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न जो चरित्र की संवेदना के सजीव प्रतिमान दृष्टिगोचर होते हैं, उसी प्रकार उनके माता पिता परिजन और संयोग से उन्हें मिल गये हैं हनुमान जी जैसे परम चरित्रनिष्ठ सर्वतो भावेन समर्पित सेवक। किम्बहुना भगवान् श्रीराम के मित्र सुग्रीव और विभीषण। ये सभी अपने चरित्र की मर्यादा में आबद्ध हैं। सबकी अपनी मर्यादा है कोई मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता। एक ऐसी परिस्थिति बनती है जहाँ पत्नी उद्विग्न होकर चरित्रमर्यादा के उल्लंघन में सर्वथा सम्भावनास्पद बन सकती है। किन्तु ऐसी परिस्थिति में भी श्रीरामचरितमानस की नायिका सीता जी की चरित्रमर्यादा अक्षुण्ण है। वनवास का वह काल, करुणा का वह वातावरण जहाँ सामान्य व्यक्ति का मन डिगने के लिए पूर्णतः सम्भावनास्पदा हो चुका होता है वहीं एक किशोरी भर्तवत्सला सीताजी बोल पड़ती हैं-

मैं सुकुमारि नाथ बन जोगू।

तुमहिं उचित तप मो कहूँ भोगू॥

ऐसे बचन कठोर सुनि जौ न हृदय बिलगान।
तौ प्रभु बिषम बियोग दुख सहिहैं पामर प्रान॥

किम्बहुना श्रीराम की लीला सहचरी बनने की स्थिति में माया की सीता भी अपनी चरित्रमर्यादा से डिगती नहीं दिखतीं। जबकि सम्भावना शत प्रतिशत उपस्थित होकर एक प्रकार से विवश करने को उद्यत प्रतीत होती है। वहाँ भी लक्ष्मण के हठ करने

पर सीताजी सच्चरित्र ही दिख पड़ रही हैं और बोल पड़ती हैं-

मरम बचन जब सीता बोली।

हरि प्रेरित लछिमन मति डोली।।

इसी प्रसंग पर हमने रामायणम् (भावार्थबोधिनी) में बहुत कुछ लिखा है वह किसी से छिपा नहीं है। भ्राताओं में श्रीराम के साथ अधिक भूमिका निभाते हैं श्रीलक्ष्मण। सीताहरण के पश्चात् कदाचित् श्रीराम कह सकते थे कि तुमने मेरे आदेश का उल्लंघन किया पर यहाँ भी एक बड़े भ्राता का चरित्र है। उसकी है उदात्त मंगलमय मर्यादा। श्रीराम यह जानते हैं कि सीता जी के द्वारा लक्ष्मण जी से मेरे आदेश का उल्लंघन कराया गया है फिर भी वे शान्त भाव से कहते हैं-

रघुपति अनुजहिं आवत देखी।

बाहिज चिन्ता कीन्ह बिशेषी।।

श्रीराम इतना कहकर ही अपनी इति कर्तव्यता का बोध करते हैं कि-

जनकसुता परिहरी अकेली।

आयहु तात वचन मम पेली।।

सीता जी को आपने अकेली छोड़ दिया, भैया! आप मेरे वचन का उल्लंघन करके चले आये। इस समय सामान्य भ्राता अपनी चारित्रिक मर्यादा का उल्लंघन कर सकता था। यदि कोई दूसरा होता तो कह देता मैं क्या करता आपकी पत्नी ने ही तो कठोरतम वाक्य कहकर मुझे प्रेरित करके भेज दिया। धन्य है यहाँ गोस्वामी जी जैसा अप्रतिम मर्यादा शिल्पी, ऐसी परिस्थिति में भी छोटे भाई की मर्यादा यहाँ द्रष्टव्य है-

गहि पद कमल अनुज कर जोरी।

कहेहु नाथ कछु मोहि न खोरी।।

अर्थात् लक्ष्मण जी ने चरण पकड़कर कह दिया कि मेरा यहाँ कोई भी दोष नहीं है। सहदेव! अग्नि

भी कङ्गिन परिस्थिति को एक भी बार श्रीलक्ष्मण पर नहीं खीझे कि तुम्हारे कारण ऐसी परिस्थिति में दोनों की चारित्रिक मर्यादा दृष्टव्य है। ठीक ऐसी परिस्थिति में महाभारत के भीमसेन ने युधिष्ठिर के लिए कह दिया था कि सहदेव! अग्नि लाओ मैं युधिष्ठिर के हाथ को जला देता हूँ। परन्तु इससे भी कठिन परिस्थिति को देखकर भी श्रीराम एक भी बार लक्ष्मण पर नहीं खीझे कि तुम्हारे कारण सीता का हरण हुआ और एक भी बार श्रीलक्ष्मण भी असन्तुलित नहीं हुए यही है यहाँ कि स्वभ्रातृचरित्र मर्यादा। पिता का भी अपना एक चरित्र है वह श्रीरामचरितमानस में ही अनुपमेय रूप में प्रस्तुत हुआ है। पिता यह जानता है कि निर्दोष श्रीराम को बनवास दिया जा रहा है और उनका जाना उचित नहीं होगा। पर यहाँ एक मर्यादा है। श्रीराम के साथ एक उदार चिन्तक पिता के-

राम राम राखन हित लागी।

बहुत उपाय किये छल त्यागी।।

वे स्पष्ट नहीं कह रहे हैं कि राम को वन नहीं जाना चाहिए। काकुवक्रोक्ति से कहते हैं-

और करै अपराध कोउ और पाव फल भोग।

अति विचित्र भगवन्त गति को जग जानै जोग।।

सामान्य पुत्र इस परिस्थिति में मर्यादा का उल्लंघन कर सकता था पा कर सकता है पुत्र को यह कहने का अधिकार है कि आप मुझे किस अपराध से बनवास दे रहे हैं इस प्रकार की निर्दोष परिस्थिति में मुझे क्यों दण्डित किया जा रहा है परन्तु एक आदर्श पुत्र की चरित्र मर्यादा है। श्रीराम पिता दशरथ जी से एक भी बार नहीं पूछते कि आप किस कारण मुझे वन में भेज रहे हैं। उल्टे अपने अपराध के प्रति शंकित होते हुए से श्रीराम दिखते हैं। वे कहते हैं कि अवश्य मुझसे कोई अपराध हो गया होगा। यद्यपि उसका संज्ञान मुझको अभी नहीं

हो पा रहा है। परन्तु मेरे प्रति पुत्र प्रेम के कारण ही पिता श्री मुझसे कुछ नहीं कह रहे हैं-

राउ धीर गुन उदधि अगाधू।

भा मोहि ते कछु बड़ अपराधू।।

जाते मोहि न कहत कछु राऊ।

मोरि शपथ तोहि कहु सतिभाऊ।।

पिता पुत्र का धर्मसंकट जानता है और श्रेष्ठ पिता को अपने कर्तव्य का बोध है। वह यदि अपने पुत्र को कर्तव्यच्युत कर देता है तो पिता की चारित्रिक मर्यादा पर लाञ्छन आ सकेगा। इसलिए प्रभु को बनवास भेजकर अपने लिए मृत्यु की आमन्त्रण पिताश्री दशरथ को श्रेष्ठ लग रहा है न कि अपने जीवन की रक्षा के लिए प्रभु के वनगमन का निषेध-

अस कहि राम गमन तब कीन्हा।

भूण शोक बस उतर न दीन्हा।।

अद्भुत है यहाँ पिता की चरित्र मर्यादा और अद्भुत है पुत्र की चरित्र मर्यादा। पुत्र पिता के संकोच का संरक्षण कर रहा है। यहाँ दो बिन्दु द्रष्टव्य हैं- एक तो ताजमहल जैसी विश्व प्रसिद्ध शिल्पमण्डित भवनभित्ति के निर्माता शाहजहाँ को उसके पुत्र औरंगजेब द्वारा बन्दीगृह में ठूस देना, उसे एक अन्न खाने के लिए विवश करना और एक नौकरी करने के लिए बाध्य करना। दूसरी ओर पिता कराहकर इस घटना के लिए बार बार अभिप्सित होता हुआ दिखता है कि पुत्र उसे बन्दी बना ले परन्तु पुत्र की भी अपनी अद्भुत चरित्र मर्यादा है। श्रीराम सभी से यही कह रहे हैं कि तुम सबको वही करना है जिससे पिताश्री मेरे विषय में चिन्तित न हों-

बारहि बार जोरि जुग पाती।

कहत राम सब सम मृदुबानी।

सोइ सब भाँति मोर हितकारी।

जेहि ते रहैं भुआल सुखारी।।

सेवक की मर्यादा के औचित्य से लक्ष्मण जी

भी भली भाँति परिचित हैं। वे बोलते अवश्य हैं पर यह जानते हैं कि मर्यादा उल्लंघन के निकट पहुँचते जा रहे हैं-

बिनु पूँछे कछु कहहुँ गोसाईं।

सेवक समय न ढीठ ढिठाई।।

समुद्र निग्रह के प्रकरण पर जब विवाद उपस्थित होता है तब लक्ष्मण जी अपनी सेवक मर्यादा का ही उत्कर्ष प्रस्तुत करते हुए कहते हैं-

नाथ दैव कर कवन भरोसा।

सोषिय सिन्धु करिय मन रोसा।।

इस प्रकार जहाँ भी हम दृष्टि डालते हैं वहाँ चरित्र की मर्यादा स्पष्ट रूप से लक्षित होती है। वहाँ के मंत्री का भी अपना एक चरित्र है। श्रीराम को शकुनि जैसा दुष्ट मंत्री नहीं मिला है जो राजा को सर्वनाश की ओर ले जा रहा हो। एक ओर धृतराष्ट्र को शकुनि जैसा दुष्ट मन्त्री मिला जिसके पास चरित्र की कोई मर्यादा है ही नहीं और उसी के षड्यन्त्र के कारण महाभारत जैसे अकाण्डताण्डव के भयंकर विभीषिकामय परिणाम से भुन गई सम्पूर्ण भारत वसुन्धरा। परन्तु श्रीराम के मंत्री सुमन्त्र एक अलौकिक चरित्र मर्यादा से बँधे हुए हैं। वे श्रीराम के द्वारा निर्दिष्ट अनुशासन में ही अपनी इतिकर्तव्यता की निष्ठा का पुनः पुनः निदर्शन कर पाते हैं। कैकेयी सुमन्त्र को बुलाती है और वह श्रीराम को बुलाने के लिए सुमन्त्र को कहती हैं-

आनहु रामहिं बेगि बोलाई।

महाराज वसिष्ठ की आज्ञा से सुमन्त्र श्रीराम को बनवास की ओर ले जा रहे हैं। अयोध्यावासी रथ के नीचे गिर पड़ते हैं परन्तु सुमन्त्र यहाँ अयोध्या के प्रेम की अपेक्षा श्रीराम के अनुशासन को वरीयता देते हैं। श्रीराम सुमन्त्र से कहते हैं कि चारों ओर से चिन्हों को समाप्त करके हमें ले चलिये। सुमन्त्र मान लेते हैं क्योंकि इस समय वे मंत्री और सारथी

दोनों की चरित्र मर्यादा का निदर्शन करा रहे हैं और चारों ओर से चिन्हों को निरस्त करते हुए वे श्रीराम को शृंगवेरपुर ले जा रहे हैं। यद्यपि परावर्तन के समय सुमन्त्र अपने मन को धिक्कारते हैं परन्तु मानते हुए इस कठोर कर्तव्य को चरित्र मर्यादा के निर्वहण का परम पावन परिणाम ही-

अहह मन्द मन अवसर चूका।

अजहुँ न हृदय होत दुइ टूका।।

इन सबकी अपनी अपनी मर्यादाएँ हैं और सभी को उसी मर्यादा क्षेत्र में रहना है। एक अनुपम उदाहरण द्रष्टव्य है श्रीरामचरितमानस की चरित्र मर्यादा का। यह आविद्युत पावन विदित है और मानस की वर्णना का भी यही संकेत है कि श्रीराम के प्रति भरतभद्र का अगाध प्रेम है। श्रीराम के प्रति भरत की अगाध निष्ठा भी है। परन्तु प्रेम और निष्ठा के असन्तुलन को रोकने के लिए भी विष्णु भूमिका निभा रही हैं उनकी सेवक चरित्र मर्यादा। यह जानते हुए भी कि श्रीराम भरतभद्र को प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं। बनवास की कठोर परिस्थितियों के पर्याकलन में भी भरत की चरित्र मर्यादा ने अपना रंग दिखाया है। श्रीलक्ष्मण के शक्ति द्वारा बिद्ध हुए अंजनानन्दवर्धन प्रभु हनुमान जब भरत के मन में एक द्वन्द्व निश्चित रूप से उपस्थित हो सकता है कि मैं तुरन्त जाकर अपनी सेना के साथ प्रभु के युद्ध में भागिता निभाऊँ और प्रभु की कोई न कोई सहायता करूँ। परन्तु इस द्वन्द्व को निश्चित रूप से भरत जी की सेवक चरित्र मर्यादा अन्यथा सिद्ध कर ही नहीं रही अपितु करने में सफल होती दिख रही है। क्योंकि भरत जी को श्रीराम के द्वारा यह अनुशासन प्राप्त हुआ है कि तुम चौदह वर्ष पर्यन्त अयोध्या की ही सेवा करोगे-

अस बिचारि सब सोच बिहाई।

पालहु अवध अवधि भरि जाई।।

प्रेम और निष्ठित होने पर भी अपनी सेवक

चरित्र मर्यादा के कारण ही भरत श्रीअवध से श्रीराम की सहायता में नहीं आये क्योंकि उनको अवध की रक्षा का दायित्व दिया गया है। परन्तु भरतभद्र की इस मनोदशा का वर्णन स्वयं गोस्वामी तुलसीदास जी ने गीतावली में भी किया है-

सेवा इतै स्वामि संकट उत परतन कछुक कियो है।
तुलसीदास बिहरौ अकाथ अब कौतुक जात कियो है।

किम्बहुना, चित्रकूट की परिस्थिति में भरतभद्र के आ जाने पर लक्ष्मण के मन को भी यही द्वन्द्व उद्वेलित करता है। एक ओर भ्राता से मिलने की उत्कण्ठा और दूसरी ओर स्वामी द्वारा निर्दिष्ट सेवा पद्धति का कठोर निर्वहण। लक्ष्मण जी की मनोदशा का वर्णन करते हुए गोस्वामी जी कहते हैं-

बन्धु सनेह सरस एहि ओरा।

उत साहिब सेवा बर जोरा।।

मिलि न जाइ नहिं गुदरत बनई।

सुकबि लखन मन की गति भनई।।

इसी प्रकार माँ के चरित्र की मर्यादा के एक अनमुकरणीय परिदृश्य की ओर हम आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहेंगे। कौसल्या जैसी पुत्रवत्सला अपने इकलौते पुत्र को वन जाते हुए देख रही हैं। कौसल्या जी चाहती हैं कि वे श्रीराम के साथ जा सकती थीं और उन्हें निहारकर इस आपतित भीषण विषाद को अल्प कर सकती थीं। परन्तु चरित्र मर्यादा उन्हें ऐसा करने से रोकती हैं। कौसल्या जी स्वयं कह पड़ती हैं-

जौ सुत कहों संग मोहि लेहू।

तुम्हरे हृदय होइ सन्देहू।।

यदि मैं यह कहूँ कि मुझे साथ ले चलो तो तुम्हारे ही मन में सन्देह होगा अर्थात् तुम सोचोगे कि मेरी माँ पतिपरायण नहीं है। अतः यहाँ पतिपरायण और पुत्रवत्सला माँ, उभरते हुए दोनों द्वन्द्वों के थपेड़ों को चरित्र मर्यादा के महामन्त्र से उपशान्त करने में

सफलता को प्राप्त कर रही हैं। इसी प्रकार सुमित्रा जैसी चरित्रमर्यादा के परिणाम स्वरूप श्रीराम को पहुँचाने के लिए भी नहीं आती चुपचाप आँसू पीकर रह जाती है। इसी प्रकार हनुमान जैसे उदात्त सेवक की चरित्र मर्यादा के दृश्य भी चिन्तक के हृदय में अमिट छाप छोड़े बिना नहीं रहते। हनुमान जी को अपना जीवन यद्यपि श्रीराम के प्रति समर्पित है फिर भी उन्हें सुग्रीव के हित भी अपने विहित कर्तव्यों का बोध होता है उन कर्तव्यों के निर्वहण में वे सफल भी होते हैं। एक साथ स्वामी और वानरराज सुग्रीव दोनों की मनः परिस्थितियों के सँझल में श्रीहनुमान अपनी चारित्रिक मर्यादा का ही प्रयोग करते हैं। सुग्रीव के साथ रहते हुए भी उन्हें कर्तव्य से च्युत होता देख मन्त्री होकर भी हनुमान जी चरित्रमर्यादा के आलोक में उन्हें समझाने का प्रयत्न करते हैं—

इहाँ पवनसुत हृदय विचारा।

रामकाज सुग्रीव बिसारा।।

निकट जाइ चरननि सिर नावा।

चारिहुँ विधि तेहिं कहि समुझावा।।

और श्रीराम को सुग्रीव से मिलाने में भी हनुमान जी की चरित्र मर्यादा ही निमित्त रही है—

एहि विधि सकल कथा समुझाई।

लिए दुऔ जन पीठि चढ़ाई।।

सुग्रीव जैसा मित्र और उसकी अपनी चरित्र मर्यादा, मित्रता के मूल में सुग्रीव के जीवन का सम्बल बन रहा है उनके द्वारा किये हुए सीता जी के वस्त्रों का संरक्षण और यही कृत्य कृतज्ञशिरोमणि श्रीराम को कृतज्ञता की मर्यादा से मण्डित करके सुग्रीव के

तब अनुजहि समुझापेउ रघुपति करुनासीव।

भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीव।।

इसी प्रकार श्रीराम के जीवन से जुड़े खल शत्रुओं की भी एक चरित्र मर्यादा है। उसका निदर्शन मानस

में पद पद पर दृष्टिगोचर होता है। महाभारत काल में शत्रु की कोई चरित्र मर्यादा नहीं है और न मित्र की। परन्तु रामचरितमानस का सेतु मर्यादा के सुदृढ़ उपकरणों से निर्मित हुआ है। रामचरितमानस का नायक शत्रु है रावण और महाभारत का नायक शत्रु है दुर्योधन। इन दोनों में भी उतना ही अन्तर दिखता है जितना आकाश और पृथ्वी का। रावण राक्षस होता हुआ भी अपने चरित्र की मर्यादा से बँधा हुआ है और इसीलिए द्वन्द्वयुद्ध के प्रकरण में वह अधर्म का अवलम्बन नहीं लेता। श्रीराम से युद्ध करता है पर कहता है कि मैं तब तक आपसे युद्ध करूँगा जब तक आप युद्ध से पलायन नहीं करेंगे। वह कहता है—

आजु बैर सब लेउँ निबाही।

जौ रन भूप भाजि नहिं जाही।।

जबकि महाभारत में ऐसा कुछ नहीं है। वहाँ किसी की कोई मर्यादा ही नहीं है। रामचरितमानस का शत्रु अपने शत्रु की मनोदशा को ठीक ठीक समझता है और यहाँ दोनों ही प्रतिद्वन्द्वी एक दूसरे की मनोदशा की मर्यादा का पर्याकलन भी ठीक ठीक करते हैं। श्रीराम रावण पर तभी तक शस्त्र का प्रहार करते हैं जब तक वह निश्शस्त्र नहीं रहता। निश्शस्त्र की परिस्थिति में रावण पर श्रीराम शस्त्र प्रहार नहीं करते। जाम्बवान के द्वारा लात प्रहार करने पर रावण के मूर्च्छित होने पर श्रीराम के स्थान पर यदि कोई दूसरा होता तो रावण का शिर काटकर उसे समाप्त कर देता परन्तु ऐसी परिस्थिति में भी जबकि महाभारत में ऐसा हुआ भी जब कर्ण का रथ दलदल में फँसा, कर्ण रथ के निकालने में व्यस्त हुए और अर्जुन से अनुरोध भी किया कि तुम मुझे मत मारना परन्तु अर्जुन ने ऐसा इसलिए नहीं किया कि वह पहले ही अभिमन्यु के वध प्रकरण में अपने अधार्मिकता का परिचय दे चुका था। इसलिए

निश्शस्त्र होने पर भी कर्ण पर अर्जुन ने शस्त्र का प्रहार किया और उसका वध करने में कृतकार्य हुआ। परन्तु श्रीराम रावण समर में ऐसा कुछ नहीं हुआ। जाम्बवान द्वारा मूर्च्छित किये जाने पर भी तब तक रावण की प्रतीक्षा करते हैं जब तक वह स्वस्थ होकर अस्त्रशस्त्र से युक्त और रथ पर विराजमान होकर श्रीराम के प्रति आक्रमण करने नहीं दौड़ता। यद्यपि इस प्रतीक्षा में राम को लगभग छः प्रहार निरर्थक गँवाने पड़े परन्तु चरित्र की मर्यादा ने निश्शस्त्र रावण पर प्रहार करने के लिए रावण को प्रेरित नहीं किया। दोनों ही अपनी अपनी मर्यादा की मंगलमयी श्रृंखला में बँधकर एक उदात्त आदर्श का सर्दन कर रहे हैं। इसीलिए कहा भी जाता है—

रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव।

युधिष्ठिर का शत्रु दुर्योधन द्रौपदी के प्रति जिस कदाचार का वर्तन करता है जिस कदाचार की नग्नताण्डव विभीषिका का दर्शन करता है उसकी जितनी कठोर भर्त्सना की जा सके की जानी चाहिए। भरी सभा में जहाँ दुर्योधन अपनी जाँघ ठोककर द्रौपदी को निर्वस्त्र अवस्था में उसी पर बैठने का आग्रह करता है। इस दृश्य जैसी कदाचित् मर्यादा के उल्लंघन की विभीषिका कहीं नहीं देखी जा सकेगी। ठीक उसी परिस्थिति में रावण सीता का हरण करता है परन्तु वहाँ भी उसके चरित्र की मर्यादा है। सीता जी के प्रति किसी बाण का प्रयोग नहीं करता और सीता जी के हित के विरुद्ध कुछ भी नहीं कहता। यथा—

**हारि परा खल बहु विधि भय अरु प्रीति देखाइ।
तब अशोक पादप तर राखेसि जतन कराइ।।**

जब सीता जी ने नहीं माना तो अशोक वाटिका में यत्नपूर्वक रखा। रावण ने सीता जी के प्रति किसी प्रकार के अश्लील वाक्य का प्रयोग नहीं किया जबकि दुर्योधन की प्रेरणा पर कर्ण ने द्रौपदी को

वीरांगना तक कह डाला। कर्ण जैसे दानी ने एक भारतीय ललना का अपमान करने में किसी प्रकार का संकोच नहीं किया। रावण सीता जी के मौलिक अधिकारों की रक्षा से परिचित है। उसको वह अपना दायित्व मानता है जबकि दुर्योधन ऐसा नहीं करता। पाण्डवों के बनवास के समय भी दुर्योधन शत्रु की मर्यादा का किसी प्रकार पालन नहीं करता जबकि रावण श्रीराम के प्रति कुछ भी ऐसा नहीं करता। इसीलिए मानसकार श्रीराम के शत्रु की मर्यादा का उल्लेख करते हुए कहते हैं—

बैरिउ राम बड़ाई करहीं।

केलनि मिलनि विनय मन हरहीं।।

मेरे इस लेख में श्रोता भली प्रकार सुन चुके हैं कि रामचरितमानस में पग पग पर प्रत्येक पात्र के साथ उसकी भुवनमंगलकारिणी चरित्र मर्यादा जुड़ी है। यहाँ केवट जैसा सामान्य पात्र भी श्रीराम के चरण पखारने को व्याज बनाकर उनकी धर्मतापित चरणों की शीतलता के आधान का ही तो प्रयास कर रहा है। वहाँ भी वह श्रीराम को निर्बल नहीं ठहराता और अहल्या के उद्धरण का व्याज बना लेता है जब वह कहता है कि आपके चरणों के स्पर्श से शिला नारी बन गई थी तो मेरी नाव भी नारी बन जायगी मेरी जीविका चली जायगी। यह एक सामान्य नाविक की निगूढ़ चरित्र मर्यादा है। वह कह सकता था कि आप थक चुके हैं आपका चरण धो लूँ। पर वह जानता है कि यह कहने से श्रीराम के निर्बलता द्योतक जैसा अशिष्ट व्यवहार होगा और राजाधिराज की मर्यादा के उल्लंघन का भी गम्भीरतम प्रत्यवाय के रूप में झेलना पड़ेगा। यहाँ तो कोल किरात भी अपने चरित्र की मर्यादा से बँधे हैं। स्वयं कोल किरात कहते हैं कि हममें सद्गुणों का आधान कहाँ सम्भव था? हम तो कुटिल जीवों के हिंसक, रातदिन पाप करने वाले हैं हममें ऐसे

सद्गुण कैसे आए। कहाँ से मिला हमको ऐसा साद्गुण्य। निश्चय ही यह परमात्मा के दर्शन का प्रभाव है। परमात्मा श्रीराम के दर्शन से कोल किरातों में भी चरित्र की मर्यादा के पालन का एक उत्साह जगा। और वे कह बैठे-

यह हमारी अति बड़ि सेवकाई।

लेहिं न बासन बसन चोराई।।

इस प्रकार मछभारत और रामचरितमानस दोनों की परिस्थितियों का अवलोकन करने से एक ही बात स्पष्ट हो जाती है कि रामचरितमानस में जो भी पात्र वर्णित है उसका अपना एक अलौकिक चरित्र है और उसकी अपनी एक अलौकिक मर्यादा है। इसे संयोग ही कहा जाय कि श्रीरामचरितमानस में एक ऐसा पात्र मिलता है जिसके जीवन में कोई मर्यादा नहीं है। कदाचित् उसकी मर्यादाहीनता के कारण ही नारी होने पर भी उसे विरूपित करने के लिए श्रीराम ने श्रीलक्ष्मण को प्रेरित किया। जैसा कि हम कह चुके हैं कि रामचरितमानस में प्रत्येक पात्र की एक चरित्र मर्यादा है परन्तु एक ऐसा कुपात्र है जिसके चरित्र में कोई मर्यादा नहीं है। शूर्पणखा रावण की बहिन है और श्रीराम दशरथ जी के पुत्र हैं। एक दृष्टि से देखा जाय दोनों ही राजपरिवार के होने के कारण भाई बहिन के पवित्र सम्भावित सम्बन्ध से बँधे हैं पर शूर्पणखा उस सम्बन्ध का निर्वहण नहीं कर पा रही है। इसी प्रकार अवस्था के क्रम में शूर्पणखा श्रीराम की माँ जैसी है। पर माँ की मर्यादा के निर्वहण का उसमें कोई उत्स नहीं है। वैसे देखा जाय तो श्रीराम सम्पूर्ण जगत के पिता होने के नाते उसके भी तो पिता हैं। परन्तु शूर्पणखा के जीवन में इस प्रकार का अद्यःपतन आया क्यों? उसने इस प्रकार की चारित्रिक मर्यादा का मंगलमय पाथेय क्यों नहीं प्राप्त किया। इसका एक ही उत्तर गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस में दिया है-

भ्राता पिता पुत्र उरदारी।

पुरुष मनोहर निरखत नारी।।

होइ बिकल सक मनहिं न रोकी।

जिनि रवि मनि द्रव रविहिं बिलोकी।।

अर्थात् जिस समय नारी भ्राता, पिता या पुत्र में भी पुरुषत्व और मनोहरत्व का दर्शन करेगी निश्चित उसका पतन होगा। संकेत यही है कि किसी भी महिला को अपने पति से अतिरिक्त किसी पुरुष में पौरुष और मनोहरत्व का आकलन नहीं करना चाहिए अन्यथा उसका पतन होता है। यहाँ एक सबसे रमणीयतम प्रसंग आप सबके लिए ध्येय होगा और ध्येय होना भी चाहिए। जहाँ सामान्य व्यक्ति को यह लगता है कि माया की सीता मर्यादा का उल्लंघन करने जा रही है जब कि ऐसा नहीं है। मारीच द्वारा स्वयं को कपाटमृग बना लेने पर सीताजी श्रीराम को उसके वध करने के लिए प्रेरित करती है-

सत्यसन्ध प्रभु बध कर एही।

आनहु चर्म कहति वैदेही।।

वस्तुतः यह एक पत्नी की मर्यादा है उसकी अपनी चारित्रिक मर्यादा की यही परिस्थिति है कि वह अपनी ईप्सित वस्तु की चर्चा अपने पति से करे। सीताजी ने इसी मर्यादा के रक्षण के लिए श्रीराम को कनकमृग मारने के लिए प्रेरित किया। लक्ष्मण का वहाँ से न जाना यह उनकी वैचारिक मर्यादा थी और लक्ष्मण को वहाँ भेज देना यह माया की सीता की चरित्र मर्यादा है। इसके अनन्तर लक्ष्मण द्वारा खींची गई रेखा का उल्लंघन सामान्य दृष्टि से लगता है कि यहाँ सीता जी मर्यादा का उल्लंघन कर रही हैं जब कि ऐसा नहीं है। सीता जी को यहाँ पता है कि रेखा लाँघने पर मैं सुरक्षित नहीं रहूँगी परन्तु वह यह भी जानती हैं कि वे रघुकुल की वधू की प्रतिबिम्ब हैं। रघुकुल के नियमानुसार वहाँ जाकर कोई भिक्षुक

बिना भिक्षा के नहीं लौटता। उसे भिक्षा प्राप्त होती ही है-

मंगन लहहिं न जिन के नाहीं।

ते नखर थोरे जग माहीं।

जब कि रावण यह कहने जा रहा है कि वह बँधी भिक्षा नहीं लेगा। रघुकुल की इस उदात्त परम्परा की रक्षा और अपनी बधूचित् मर्यादा का रक्षण करते हुए लक्ष्मण के निर्देश की अनदेखी करके भी सीता जी ने रेखा लाँघी यह यहाँ भी चरित्र मर्यादा पालन का आलौकिक निदर्शन है। सीता जी का हरण हुआ वे राजधर्म का और बन्दीधर्म का पालन कर रही हैं। सीता जी स्वयं कहती हैं कि रावण! मैं तुझे जला सकती थी पर मैं एक चरित्र मर्यादा से बँधी हुई हूँ। वहाँ है तपस्विनी की चरित्र मर्यादा और बन्दी की चरित्र मर्यादा। बन्दी किसी का वध नहीं कर सकता। वध तो वह करेगा जो बन्दी छुड़ाकर बन्दिनी को ले जायगा। उसी के द्वारा बन्दी बनाने वाले को वध उचित होगा जो छुड़ाने आयगा। इसीलिए सामर्थ्य होने पर भी सीता जी रावण का वध करने का निश्चय नहीं कर रही हैं। वे इतना ही कहकर रावण को चुप कराती हैं जब रावण उनसे कहता है-

कह रावण सुनु सुमुखि सयानी।

मन्दोदरी आदि सब रानी॥

तब अनुचरी करउँ पन मोरा।

एक बार बिलोकु मन ओरा॥

इसका उत्तर सीता जी-

तुन धरि ओट कहति बैदेही।

सुमिरि अवधपति परम सनेही॥

सीता जी का बहुत स्पष्ट कहना है कि खद्योत के प्रकाश से नलिनी कभी विकसित नहीं होती-

सुनु दशमुख खद्योत प्रकासा।

कबहुँ कि नलिनी करई बिकासा॥

किम्बहुना श्रीरामचरितमानस में एक पक्षी भी

जिस मर्यादा का पालन कर लेता है उस प्रकार का चरित्र मर्यादा पालन महाभारत का सर्वोत्तम पात्र वृहवर्च भी नहीं कर पाते। यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है। श्रीरामचरितमानस में जटायु और महाभारत का भीष्म दोनों अपनी बूढ़ी आँखों से नारी का अपमान देख रहे हैं। दोनों ही समर्थ हैं और अधिक विचार करने पर यह कहा जा सकता है कि भीष्म अधिक समर्थ हैं और जटायु कम। क्योंकि जटायु पक्षी है परन्तु शारीरिक दृष्टि से भीष्म की अपेक्षा कम समर्थ होने पर भी मर्यादा की दृष्टि से जटायु भीष्म पर इतने भारी पड़े कि जिसका इतिहास ने आज तक पुनरावर्तन नहीं किया। यही कारण है कि सीता जी के अपमान से उद्विग्न होकर जटायु ने रावण का प्रतिकार किया। वे सफल हुए या नहीं यह तो पृथक् चर्चा का विषय होगा पर एक प्रकार से उन्हें सफल मानना चाहिए कि जटायु ने रावण को उसकी सीमाओं का बोध अवश्य करा दिया। गोस्वामीपाद वर्णन करते हैं-

धरि कच बिरथ कीन्ह महि गिरा।

सीतहिं राखि गीध पुनि फिरा॥

और इधर सर्वसमर्थ होकर भी नारी की विडम्बना का निरसन न करके, द्रौपदी गुहार लगा रही है पर भीष्म कान में अंगुलि डालकर चुपचाप बैठे हैं। लगता है उनको चरित्र मर्यादा से कुछ लेना देना नहीं है। दुर्योधन असभ्यतमव्यवहार करता जा रहा है और भीष्म सह रहे हैं ठीक दूसरी ओर सीता जी की एक गुहार पर जटायु ने रावण को ललकारा-

सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा।

करिहुँ जातुधान कर नासा॥

रावण से कहा-

रे रे दुष्ट ठाढ़ किन होही।

निर्भय चलेसि न जानेसि मोही॥

और इसी का परिणाम हुआ कि भीष्म बाणों की शैय्या पर और जटायु निर्वाणदायक परमात्मा

की गोद की शैय्या पर। भीष्म पूजक और जटायु पूज्य भीष्म के समक्ष आये भगवान श्रीकृष्ण सारथी और जटायु के समक्ष आये परमात्मा श्रीराम महारथी। भीष्म द्रौपदी को किसी प्रकार का आश्वासन नहीं दे रहे हैं जबकि जटायु कह रहे हैं- सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा। इसीलिए भीष्म श्रीकृष्ण के सामने मौन पर जटायु के समक्ष श्रीराम प्रतिज्ञा कर लेते हैं कि- सीता हरनि तात जनि, कहहु पिता सन जाइ। जौ मैं राम त कुल सहित कहिहि दशानन आइ।।

इस प्रकार इस निबन्ध का सारांश यह है कि रामचरितमानस का प्रत्येक श्रीराम से जुड़ा हुआ पात्र अपनी अपनी चरित्र की मर्यादा में निबद्ध होकर भारत को यह सन्देश दे रहा है कि वर्तमान भारत की ज्वलन्त समस्याओं का यदि कोई समाधान कर सकता है तो उसका नाम है श्रीरामचरितमानस।

सर्वग्रन्थान् परित्यज्य मानसं शरणं ब्रज।
नमो राघवाय।

आतंकवाद को उखाड़ फेंकें

□ पूज्यपाद जगद्गुरु जी

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज ने आज गाजियाबाद में रामकथा में कहा कि भगवान श्रीराम ने रावण आदि राक्षसों के आतंकवाद का जड़मूल से उन्मूलन किया था। आज की सरकार को उनसे प्रेरणा लेकर आतंकवाद के समूल उन्मूलन का दृढ़ संकल्प लेना चाहिए।

उन्होंने कहा कि इससे बड़ी शर्मनाक बात और क्या हो सकती है कि २६ जनवरी को गणतंत्र दिवस के पावन दिन भारत के मुकुटमणि कश्मीर में राष्ट्रध्वज तिरंगा फहराने वालों का उत्पीड़न कर उन्हें ध्वज नहीं फहराने दिया गया। इस शर्मनाक घटना से यह सिद्ध हो गया है कि सरकार सत्ता की लालसा में पाकिस्तानी आतंकवादियों की तुष्टिकरण की घातक नीति को पालने में लगी हुई है। यह सरकार की नपुंसकता का ज्वलन्त प्रमाण है।

पूज्य जगद्गुरुजी ने कहा कि जो शासन अलगाववादियों और आतंकवादियों के आगे झुकता है वह अपने राष्ट्र की एकता और अखंडता की रक्षा कदापि नहीं कर सकता। राष्ट्र व शास्त्रों की रक्षा के

लिए भगवान् श्रीराम की तरह शस्त्रास्त्रों का ही उपयोग करना आवश्यक है।

उन्होंने कहा कि भगवान् श्रीराम मर्यादा पुरुषोत्तम थे। पग-पग पर उन्होंने मर्यादा का पालन व रक्षण किया। मर्यादा की सीमा लांघने पर ही शूर्पणखा की नाक-कान कटवाने के लिए उन्हें विवश होना पड़ा था आज तो समस्त भारत मर्यादाहीनता के कारण नैतिक मूल्यों के संकट से जूझ रहा है।

जगद्गुरु जी ने कहा कि धर्म ही मानव की ऊर्जा होती है। शासन धर्म निरपेक्ष नहीं, धर्मसापेक्ष होना चाहिए। उन्होंने कहा कि अधिकांश समस्याओं का कारण छद्म धर्मनिरपेक्षता की आड़ में धर्म की मर्यादा का हनन करना ही सरकारों का लक्ष्य है। रामचरितमानस को राष्ट्रग्रंथ तथा जगद्गुरु जी ने गोवंश को राष्ट्र की धरोहर घोषित किए जाने का आह्वान किया।

प्रस्तुति- श्रीशिवकुमार गोयल

(प्रख्यात पत्रकार)

श्रीचित्रकूट में पूज्यपाद जगद्गुरु जी के संकल्प साकार

□ डॉ० उन्मेष राघवीय

- अनुष्ठानविश्राम।
- कथाप्रारम्भ।
- श्रीमानसदर्शन का हनुमदर्पण।
- विकलांग वि० वि० का तृतीय दीक्षान्त सम्पन्न।
- पूज्य गुरुदेव का जन्मदिवससमारोह।

भगवद्भक्त को भगवान् के नाम-रूप-लीला तथा धाम के स्वरूप की चर्चा सुनने की सदैव उत्कण्ठा रहती है। यही उत्सुकता और उत्कण्ठा रहती है प्रत्येक शिष्य को अपने गुरुदेव के मंगलमय समाचारों को जानने की। इसीलिए श्रीतुलसीपीठ सौरभ के प्रस्तुत अंक में प्रस्तुत है श्रीचित्रकूट के वे समाचार जो प्रत्येक हिन्दू के लिए आनन्दवर्धक होंगे।

सर्वविदित है कि पूज्यपाद जगद्गुरु रामा-नन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज का नवम षण्मासिक पयोव्रत अनुष्ठान ५ जनवरी २०११ को पूर्ण हो गया। पूर्ण उत्साह, नई तरंग उदात्त सम्भावनाएँ और अद्भुत उमंगों के साथ ५ जनवरी २०११ को जब पूज्यपाद जगद्गुरु जी अपने साधना कक्ष से बाहर आए तो हजारों नर-नारियों ने गगनभेदी उद्घोष करने प्रारम्भ कर दिए। भक्त भावुक हो उठे अपने गुरुदेव भगवान् को देखकर और प्रकृति मुस्कुरा उठी अपने प्रशंसक महाकवि, कविकुलरत्न को निहारकर। अद्भुत आनन्द हो रहा था रामानन्द और ब्रह्मानन्द का संयोग देखकर। पूज्य आचार्यश्री के ललाट पर विराजमान ऊर्ध्वपुण्ड्र की शोभा वर्णनातीत थी, दाँएँ हाथ में सुशोभित श्रीत्रिदण्ड पृथ्वी और

आकाश को निहारकर गद्गद थे, श्रीमुख पर तथा श्री मस्तक पर श्वेत केशों की शोभा बता रही थी कि हम विजयश्री लेकर आए हैं इसीलिए हमारा रंग श्वेत हो गया है। मन्द-मन्द मुस्कान से सभी को आप्यायित करते हुए जब पूज्यपाद गुरुदेव भगवान् श्रीचित्रकूट-विहारी विहारिणीजू के दर्शन करने कांच मन्दिर में उपस्थित हुए तब भक्त और भगवान् की झाँकी देखकर पूरा जनसमूह अपना जीवन कृतार्थ कर रहा था। साधक शिरोमणि एवं विद्वच्चक्रचूडामणि गुरुदेव भगवान् भी भावुकता और उत्साह के उत्स में स्नान कर रहे थे। तभी श्रीराघवपरिवार की पूज्या बुआ जी डा० गीता देवी मिश्रा ने आनन्दातिरेक के नयननीर से अपने अनुज एवं हमारे परमाराध्य गुरुदेव का मंगलाभिषेक किया और अनुशासन देते हुए कहा कि जगद्गुरु जी के महासंकल्प विकलांग विश्वविद्यालय चित्रकूट की पूर्णनिष्ठा से प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले कुलपति प्रो० बी० पाण्डेय जी गुरु जी के चरणस्पर्श करेंगे। तदनन्तर इस कथा के मुख्य यजमान श्रीराजेन्द्र प्रसाद गुप्ता आदि महानुभाव चरणस्पर्श करेंगे। सबको ऐसा प्रतीत होता था मानो गुरुदेव हमारे लिए बहुत कुछ लाए हैं इसीलिए ही हमारे मध्य आए हैं। अब क्षौर कर्म सम्पन्न किया ऐसे विकलांग युवा ने जो वि० वि० में अध्ययनरत है। उसका नाम त्रिलोकी था। स्नानादि से निवृत्त होने के पश्चात् गुरुदेव ने नवीन वस्त्र धारण किए। मध्याह्न संध्योपासना और अन्ननिर्मित भोजनादि ग्रहण करने के पश्चात् दर्शनार्थियों को पूज्य गुरुदेव ने दर्शन दिए, सबसे बहुत प्रेम से मिले। यह आनन्द वर्णनातीत था।

श्रीमानसदर्शन का हनुमदर्पण

६ जनवरी २०११ से ही पूज्य गुरुदेव ने श्रीरामकथा कहनी प्रारम्भ की। श्रीराघवपरिवार के हजारों सदस्य श्रीचित्रकूट में कथा श्रवण के लिए नौ दिनों के लिए आए थे। पूज्य गुरुदेव ने दृष्टादृष्ट महाविभूतियों को तथा भगवद्भक्त श्रोताओं को सुख प्रदान करने के लिए दिव्य रामकथा का प्रारम्भ किया। सभी आश्चर्यचकित थे कि जिन्होंने विगत छः माह से अन्न ग्रहण नहीं किया, पयोव्रत अनुष्ठान किया अश्रुतपूर्व जपयज्ञ किया वे ही जगद्गुरु जी अगले ही दिन से ३-३ घण्टों की कथा कहने के लिए पूरी तैयारी से तत्पर हैं। प्रतिदिन की कथा का संस्कार टी०वी० चैनल पर सीधा प्रसारण चलता था।

अब आ गया वह शुभ दिन जिसकी सभी को प्रतीक्षा थी। दिनाङ्क ९ जनवरी को मध्याह्नकाल में उत्तराखण्ड पीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी हंसदेवाचार्य जी महाराज और पीठाधीश्वर पूज्यस्वामी देवेन्द्रानन्द सरस्वती जी महाराज (नैमिषारण्य)। दोनों विशिष्ट अतिथियों और पूज्य जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज ने प्रस्थान किया ऐसे भवन की ओर जिसका नाम रखा गया था “मानसदर्शन”। वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के साथ इस मानसदर्शन को परमरामभक्त श्रीहनुमान जी महाराज को श्रीराघवपरिवार के परमाराध्य पूज्यपाद जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज ने समर्पित किया। इनके दाएं और बाएं हाथ पर सुशोभित हो रहे थे उत्तराखण्डपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी हंसदेवाचार्य जी महाराज एवं नारदीय पीठ के श्रीमहन्त देवेन्द्रानन्द सरस्वती जी महाराज।

गगनभेदी जयघोषों के मध्य तीनों विभूतियों ने अपने अपने आशीर्वादों से सभी को कृतार्थ किया।

उत्तराखण्डपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी हंसदेवाचार्य जी महाराज ने अपने सम्बोधन में कहा- “आज के क्षितिज में समस्त आचार्यपरम्परा में पूज्य जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जैसा कोई प्रतिभापुञ्ज व्यक्ति नहीं है। ये हमारे बड़े भ्राता हैं हम दोनों (जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी नरेन्द्राचार्य जी महाराज और मैं) इनकी दाहिनी और बांयी भुजा बनकर कार्य करेंगे। भारत की चारों दिशाओं में हम दोनों आचार्य पूज्य स्वामी रामभद्राचार्य जी के नेतृत्व में जगद्गुरु आद्यरामानन्दाचार्य जी महाराज की चरण पादुकाओं की स्थापना करेंगे।”

नारदीयपीठाधीश्वर पूज्य स्वामी देवेन्द्रानन्द सरस्वती जी महाराज ने अपने सम्बोधन में कहा कि- पूज्य जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज इतने बड़े पद पर होते हुए भी निरभिमानिता के प्रतीक हैं। जब मैं पदच्युत था तब भी पूज्य जगद्गुरु जी ने मुझे अपने स्नेह सागर में अवगाहन कराया। मैं मानसदर्शन जैसे अलौकिक निर्माण के लिए इनको कोटि कोटि बधाई देता हूँ।

तृतीय दीक्षान्त समारोह सम्पन्न

जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ०प्र०) का तृतीय दीक्षान्त समारोह भी १४ जनवरी २०११ को सम्पन्न होना था। अतः श्रीराघवपरिवार के सभी सदस्यों में उत्साह था अपने सद्गुरुदेव के विकलांग सेवा के संकल्प को साकार होते हुए देखने के लिए। श्रीतुलसीपीठ इठला रही थी अपने छोटे गुरुभाई विकलांग विश्वविद्यालय को देखने के लिए। उधर जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय चित्रकूट की पावन भूमि पर अवस्थित होकर प्रतीक्षा कर रहा था उन दर्शनार्थियों की जो इसको श्रद्धा-भक्ति-सेवा से सींचते रहते हैं। आकाश में श्रीसूर्यनारायण अपनी सन्तुलित उष्णता से सभी

के मुखमण्डल को शोभायमान कर रहे थे। सहसा कार गाड़ियों का विशाल समूह आता दिखाई दिया। लाल नीली बत्तियों वाली गाड़ियों की सुन्दर आवाज ने सभी को आनन्दित कर दिया। हमारे गुरुभाई श्री राजेन्द्र गोयल के द्वारा पूज्य जगद्गुरु जी को उनके इकसठवें जन्मदिवस पर समर्पित की गई 'इनोबा' नामक सुन्दर गाड़ी में पूज्य जगद्गुरु जी विराजमान थे। मा० राजनाथ सिंह जी भी इसी कार में सुशोभित थे। स्वयं राजेन्द्र गोयल जी ही इस कार का संचालन कर रहे थे।

विश्वविद्यालय के सभी पदाधिकारियों ने तथा मुख्यअतिथि मा० राजनाथ सिंह जी ने दीक्षान्त समारोह का निर्धारित वेश धारण करके जैसे ही विशाल पाण्डाल में डिग्री प्राप्त करने वाले छात्र छात्राओं के साथ प्रवेश किया अद्भुत आनन्द का सागर अपनी उत्तालतरंगों से सभी को आश्चर्यचकित करने लगा। विशिष्ट कलाएँ हैं जिनमें ऐसे विकलांगों की सम्भावनाओं का स्वप्न साकार हो रहा था, पूरे वातावरण में दिव्यता, अनुशासन और प्रसन्नता तीनों का साम्राज्य बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों को भी प्रेरणा प्रदान कर रहा था। धीरे-धीरे मंच का संचालन प्रारम्भ हुआ। महामहिम कुलाधिपति जी की आज्ञा से मा० कुलपति प्रो० बी० पाण्डेय, रजिस्ट्रार डा० अवनीशचन्द्रमिश्र ने अपने-अपने पारम्परिक दायित्वों का बहुत योग्यता और कुशलता से निर्वहण किया। भिन्न भिन्न संकायों के छात्रों को आहूत किया गया और उन्हें कुलाधिपति जी ने डिग्रियाँ प्रदान कीं। विकलांग छात्र छात्राओं के द्वारा कीर्तिमान स्थापित किए जाने के सभी समाचारों से दर्शकगण जयनानन्द का दर्शन कर रहे थे। इन प्रतिभा की प्रतिमाओं की विशिष्ट कलाओं को उद्घाटित करने का एकमात्र श्रेय जा रहा था पूज्यपाद जगद्गुरु जी को। अब

क्रम आ गया था मुख्य अतिथि मा० राजनाथ सिंह जी के भावोद्गार व्यक्त करने का। सर्वप्रथम मा० राजनाथ सिंह जी ने सम्पूर्ण श्रद्धा-निष्ठा और विश्वास के साथ पूज्य जगद्गुरु जी को दोनों हाथों से चरणस्पर्श किया। तदनन्तर अपने प्रकाशित भाषण से पूर्व और अतिरिक्त कुछ दो-चार बिन्दुओं पर सभी का ध्यान आकृष्ट करते हुए मुख्य अतिथि ने कहा- आज मैं गुरुदेव के द्वारा लगाए गए इस विकलांग विश्वविद्यालयरूप वृक्ष को हरा भरा देखकर बहुत अधिक प्रसन्न हूँ। इन विकलांगों को राष्ट्र की मुख्यधारा में जोड़ने के लिए पूज्य स्वामी जी द्वारा जो प्रयास किये जा रहे हैं और जंगल में मंगल करने के जो संकल्प संजोए जा रहे हैं उन सबकी मैं भूरि भूरि प्रशंसा करता हूँ। मैंने सुना है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग इस विकलांग विश्वविद्यालय की ग्राण्ट रोके हुए है जबकि सभी अनिवार्य प्रपत्र यहाँ के द्वारा पूर्ण किये जा चुके हैं। मैं आज आप सबकी उपस्थिति में घोषणा करता हूँ कि यदि यू० जी० सी० इस विकलांग विश्वविद्यालय को अनुदान नहीं देगा तो मैं लोकसभा में इस मुद्दे को सशक्त ढंग से उठाकर पूछूँगा भारत सरकार से कि यदि विकलांगों की सेवा यह आयोग नहीं कर सकता तो इसको बने रहने का क्या अधिकार है। विकलांगों को सब विकलांगों की परिस्थिति से ऊपर उठकर देखना होगा और उनकी सेवा शुश्रूषा के लिए तत्पर रहना होगा।

अध्यक्षीय भाषण करते हुए विकलांग विश्वविद्यालय के महामहिम कुलाधिपति जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी ने विकलांगों की अपनी सेवा का व्रत दोहराते हुए कहा कि मैं विकलांगों को देश के सर्वोच्च पदों पर जब तक आसीन होते हुए नहीं देख लूँगा तब तक चैन से नहीं बैठूँगा। अपने

और मा० राजनाथ सिंह जी के निकटतम सम्बन्धों की चर्चा करते हुए जगद्गुरु कुलाधिपति जी ने कहा यह विश्वविद्यालय मेरे शिष्य राघवसरकार का छोटा भाई होने से मेरा पुत्र है और राजनाथ सिंह मेरे छोटे भ्राता हैं फलतः प्रिय राजनाथ सिंह इस विश्वविद्यालय के चाचा हैं। इन्हें भी विकलांग विश्वविद्यालय के लिए कटिबद्ध होना है।

अन्त में अन्य सभी औपचारिक घोषणाओं और अनुशासन के साथ कार्यक्रम विश्राम की ओर बढ़ गया। मातृभूमि की वन्दना के साथ समारोह सम्पन्न हुआ।

ऐसे मना पूज्यपाद जगद्गुरुजी का जन्मदिवस

अब आगया सायंकाल का वह क्षण जिसकी प्रतीक्षा थी हजारों-लाखों गुरुभक्तों की। श्रीराघव परिवार के सभी महानुभाव समझ गए होंगे कि पूज्यपाद जगद्गुरु जी आज मकर संक्रान्ति के दिन ६१ वर्ष पूर्ण करके कल ६२वें वर्ष में प्रवेश करेंगे। श्रीरामचरितमानस के विशाल भवन में सायंकाल ८ बजे गुरुभक्तों की विनम्र उपस्थिति और सजावट से पूरे कार्यक्रम में सुगन्ध आने लगी। मंच का संचालन करते हुए हमारे गुरुभाई एवं श्रीतुलसीपीठ सौरभ के सम्पादक डा० सुरेन्द्र शर्मा 'सुशील' ने पूज्यपाद जगद्गुरु जी शुभागमन की जैसे ही सूचना दी सारा जनसमूह जयघोष करने लगा। पूज्य गुरुदेव भी मन्द-मन्द मुस्कान बिखेरते हुए और रामभक्तों को धन्य-धन्य करते हुए अपने आसन पर आसीन हुए।

अनेक वक्तों ने अपने भावोद्गार व्यक्त करते हुए जहाँ एक ओर पूज्य जगद्गुरु जी के संकल्पों में अपनी निष्ठा व्यक्त की और गुरुदेव की अप्रतिम प्रतिष्ठा को नमन किया वहीं दूसरी ओर अनेक

रचनाकारों ने नवीन-नवीन उन्मेषों से गुँथे हुए अपने शब्दप्रसूनों को गुरुदेव के पदपद्मों में प्रकाशित कर दिया। किसी ने पूज्यपाद गुरुदेव को अपना प्रेरक, संरक्षक तथा भारत कहा तो किन्हीं ने अपने माता-पिता गुरु तीनों के इनमें दर्शन किया। सभी के भावोद्गारों के महासमुद्र में भावुकश्रोता गोते लगा रहे थे और पूज्य गुरुदेव भी इसीलिए प्रसन्न थे कि मुझे निमित्त बनाकर ये लोग सुन्दर प्रस्तुति से मेरे राम की स्तुति कर रहे हैं।" निर्मल हृदयों के भावों को अपना शुभाशीर्वाद देते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि आप सबने मेरे से जो अपेक्षाएँ की हैं मैं उन सबका पूरी निष्ठा से निर्वहण करूँगा। वैदिक हिन्दू सनातन धर्म पर किसी भी प्रकार के आक्षेप का मैं परमप्रामाणिक उत्तर दूँगा। विकलांग सेवा के पुण्य से मैं बहुत वर्षों तक सनातन धर्म की सेवा करता रहूँ यही आप भगवान् से प्रार्थना करें। पूज्य गुरुदेव की अग्रजा और हम सबकी पूज्या बुआ जी डा० गीता देवी मिश्रा ने अध्यक्षीय आशीर्वचन देते हुए कहा कि "गुरुदेव के संकल्प को पूर्ण करने में हम सबको आगे आना चाहिए। ये महापुरुष अपने लिए कुछ नहीं करते सब कुछ विकलांगों और भक्तों के लिए ही करते हैं। प्रत्येक कार्य की सम्पन्नता का श्रेय ये राघवसरकार को ही प्रदान करते हैं।"

जिन महानुभावों ने अपने भावोद्गार व्यक्त किए उनमें प्रमुख थे- सुप्रसिद्ध कथावाचक हमारे गुरुभाई प्रेममूर्ति श्रीप्रेमभूषण जी महाराज, डॉ० श्रीमती वन्दना श्रीवास्तव, डॉ० विशेष नारायण मिश्र, सुश्री निर्मला श्रीवैष्णव, श्री हेमराज सिंह चतुर्वेदी, श्रीसुशील अग्रवाल जी, श्रीमती नलिनी निगम, डॉ० कैलाशनाथ मिश्र, श्री ज्ञानेन्द्र शर्मा, श्रीललिताप्रसाद बड़थवाल,

श्रीरघुनाथ तिवारी, डॉ० रामेश्वर प्रसाद त्रिपाठी, श्री राघवेश मिश्रा, श्रीकृष्णचन्द्र शर्मा, श्रीशरद् श्रीवास्तव, श्रीलक्ष्मीनारायण शर्मा, डॉ० कोसलेन्द्रदास जी, श्रीअभिनन्दन गुप्ता आदि।

अन्त में पूज्यपाद जगद्गुरु जी को सभी वैदिकों ने मन्त्रोच्चारण से मिष्टान्न अर्पित किया। मुरादाबाद से पधारीं और पूज्यपाद गुरुदेव को अत्यन्त आदर से निहारने वाली श्रीमती मनुस्मृति माता जी ने अपने हाथ से ही पूज्य गुरुदेव को मिष्टान्न पवाया। अद्भुत

झाँकियों के सुन्दरदर्शन के साथ ही यह कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

ज्ञातव्य है कि पूज्यपाद जगद्गुरु जी ने १५ जनवरी २०११ को श्रीकामतानाथ भगवान् की परिक्रमा की और तत्पश्चात् अपने नवीन 'श्रीराघवरथ' से राजापुर पहुँचकर अपने परमाराध्य गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज को प्रणाम किया। यही था चित्रकूटी आनन्द का ग्यारह दिवसीय शुभ समाचार। नमो राघवाय।

॥बगीची वाले हनुमान जी महाराज की जय॥

नमो राघवाय

पूज्यपाद जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज के श्रीमुख से

दिल्ली में दिव्यरामकथा

धार्मिक जनता को यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता होगी कि आगामी १४ अप्रैल से २२ अप्रैल २०११ तक मन्दिर श्रीरामहनुमान वाटिका रामलीला मैदान अजमेरी गेट आसफअली रोड़ (नई दिल्ली) में सायं ४ बजे से ७ बजे तक श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज के श्रीमुख से दिव्यरामकथा का विशाल आयोजन किया जा रहा है। इस कथा में पूज्य जगद्गुरु जी द्वारा श्रीरामचरितमानस और श्रीनारदभक्तिसूत्र के ऐतिहासिक प्रसंगों की विशद विवेचना प्रस्तुत की जाएगी।

सभी श्रोताओं को इस कथा में आवास एवं भोजन की निःशुल्क सेवा प्रदान की जाएगी। इच्छुक महानुभाव १५ मार्च २०११ तक निम्नलिखित पते पर अपने आगमन की सूचना अवश्य देने की कृपा करें।

पुजारी श्रीरामगोपालदास जी महाराज

मन्दिर श्रीरामहनुमान वाटिका

श्रीरामलीला मैदान अजमेरी गेट

आसफअली रोड़ नई दिल्ली-११०००२

सान्निध्य

आयोजक

विनीत

महात्यागीश्रीमहन्तरामकिशनदास जी महाराज

श्रीराघवपरिवार

विजय कुमार गुप्ता

(मुख्य यजमान)

रामहिं केवल प्रेम पियारा

□ श्री उमाकान्त मालवीय

राम मेरी शक्ति है और दुर्बलता भी। शक्ति इसलिए कि मैं निर्बल हूँ और राम 'निर्बल के बल है', दुर्बलता इसलिये कि मैं कामी और लोभी हूँ राम मेरे लिये नारी और दाम सी दुर्बलता है। कामिहिं नारि पियार जिमि, लोभिहिं प्रिय जिमि दाम। 'राम के प्रति' लोभ और काम मुझ से कभी नहीं छोड़ा जा सकेगा। जहाँ जब कभी राम प्रसङ्ग का अवसर मिलता है, विरत नहीं हो पाता। यत्र-तत्र मानस के अखण्ड पाठों में शामिल होने का सुयोग मिलता है। कहीं 'दीन दयाल विरुद सम्भारी....' तो कहीं '....द्रवहु सो दशरथ अजिर बिहारी' कहीं 'मोरे प्रभु तुम गुरु पितु माता...' तो कहीं '....पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी' का सम्पुट मिलता है परन्तु मित्र कपूर जी के यहाँ सम्पुट रक्खा गया था 'रामहिं केवल प्रेम पियारा' मन था कि एक सात्विक पुलक से भीग आया। '...जान लेहु जो जाननि हारा' क्या जान लेता। जबकि वास्तविकता यह है कि 'सोइ जाने जेहि देउ जनाई.....' कल्पना ने पंख खोले और उस लोक ले चली जहाँ दैविक, दैहिक, भौतिक ताप के व्यापने का प्रश्न ही परे हो गया था।

मेरे समक्ष 'भये प्रगट कृपाला' का प्रसङ्ग उजागर होता है। अवतार लेते ही राम जी का आग्रह होता है जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै। राम-कथा जितनी जहाँ मिलती है उनमें यत्र-तत्र सर्वत्र प्रेम की एक अन्तः सलिला की अजस्र धारा मिलती है। राम मेरे निकट प्रेम का पर्याय है। मेरे रस में भी तो ढाई आखर हैं। 'पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ पण्डित भया न कोय, ढाई आखर प्रेम का पढ़ै सो पण्डित होया' यह प्रेम

है जिसका रस सभी रसों से भिन्न और ऊपर है। यह राम रस है यह प्रेम रस है। 'रामचरित जे सुनत अघाहीं, रस विशेष जाना तिन नाहीं' यह रस विशेष है।

प्रेम रस पीकर जिया जाता नहीं
प्यार भी जी कर किया जाता नहीं
बिन बिंधे कलियाँ हुई हियहार क्या,
कर सका कोई सुखी हो प्यार क्या।

यह वह रस है, जिसमें दुखने का भी अपना सुख है। 'यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं, शीश उतारे भुईं धरै तब पैठे घर मांहि,' यह पूर्ण विसर्जन माँगता है। आधेतीहे विसर्जनों से, आंशिक समर्पण से इसका परता नहीं पड़ता। इसे सम्पूर्ण समर्पण चाहिए 'प्रेम गली अति साँकरी यामे दोइ न समाय, जब मैं था तब हरि नहीं अब हरि हैं मैं नाया।' मेरे लिए इस तरह का विसर्जन सम्भव नहीं है, मेरे भीतर का भक्त इतना तो चाहता ही है कि वह अपने राम की प्रतीक्षा करें, उसे टेरें, उसे भजें, उसे पायें, उसे प्यार करें, उस पर रीझें, उसको रिझायें चलचित्र की भाँति एक-एक प्रसङ्ग सामने उद्घटित होते हैं और भीतर बहुत गहरे तक भिगो जाते हैं।

गीतावली में राम भोर से ही अनरसे हैं, पय नहीं पीते, सांझ हो चली दशरथ, कौशल्य, अन्य दोनों माताएँ, अयोध्या के पुरजन-परिजन कौशल्य दशरथ गुरु वशिष्ठ की शरण गये। वशिष्ठ ने नृसिंह मन्त्र से झाड़ू फूँकी की राम किलकने लगे। सभी

वसिष्ठ के प्रति आभार व्यक्त करने लगे परन्तु गुरु महर्षि वसिष्ठ का मन तो अतल तल तक तरल हो आया था, केवल उन्हें श्रेय देने के लिए परात्पर प्रभु राम, उनका अपना राम भोर से ही रो रहा था? हाय! इस प्रेम पथिक ने कितना कष्ट उठाया।

महाकवि पुटप्पा के 'रामायण दर्शनम्' का राम बिकइयाँ चलता हुआ ठुड्डी तक इसलिए लार बहा लेता है ताकि काकस्वरूप भक्त काकभुशुण्डि उनके चिबुक से चोंच लगा कर लार का पान कर सके। कोई परिचारिका उसे उड़ा देती है तो वह आग्रहपूर्वक उसे टेर कर बुलाता है और 'कागा' को बुलाकर उसे लार का पान कराता है।

कन्नड़ कुम्हारिन कवयित्री मोल्ल निःसन्तान है। वह कौसल्या भाव से राम को भजती है, एक दिन भाव ऐसा सघन हुआ कि उसकी छातियों में दूध उतर आया। हाय! बाँझिन उस दूध का क्या करे? कैसा निर्मम क्रूर मजाक किया है उसके राम ने उसके साथ! पर यह क्या? राम तो बालक के रूप में उनके अङ्ग से जा लगे और राम को पयपान कराकर उसका मातृत्व कृतार्थ हो गया। धन्य हैं राम और धन्य है उनका प्रेम। वे तुलसी की पहरेदारी करते हैं, उन्हें समर्थ गुरु रामदास अपना अभिमान घोषित करते हैं।

माता कौसल्या स्तनपान करा रही हैं। पता नहीं राम कृतार्थ हो रहे हैं या कौसल्या। मुझे तो लगता है परस्पर दोनों कृतार्थ हो रहे हैं। कौसल्या देखती क्या हैं कि चूल्हे पर चढ़ा हुआ दूध उबल कर उफान लेता हुआ गिरने को है। वे दूध उतारने के लिए राम को गोद से अलग करती हैं, अभी आधी राह ही गयी थीं कि माँ द्वारा अपनी उपेक्षा और दूध को

प्राथमिकता पाता देख राम माख मानकर बिलख कर रो पड़े। माँ कभी दूध की ओर देखती तो कभी बिलखते हुए लाल की ओर। दो एक बार यह क्रम चलता रहा और अन्त में ममता वात्सल्य का पलड़ा भारी पड़ा। दूध को उफनता छोड़ माँ ने लपक कर बेटे को कलेजे से लगा लिया। सृष्टि के आधार प्रभु परात्पर राम प्रेम के वशीभूत होकर माँ के वात्सल्य दुलार, उसकी ममता के मुखापेक्षी हों? हे राम! यह प्रेम व्रत तुम्हीं निभा सकते हो।

दुबली-पतली गौरवर्णा कौसल्या लेटी हुई हैं, उनके पास ही नीलमणि बालक राम लेटे हैं। कविवकुलगुरु कालिदास को लगता है जैसे ग्रीष्मकालीन तन्वंगी गङ्गा के तट पर पूजा में रक्खा इन्दीवर पड़ा है। वत्सला कौसल्या के सौभाग्य की कौन कहे।

राम भूखे हैं, कौसल्या से बार-बार भोजन माँग रहे हैं। माता घर गृहस्थी में इस कदर व्यस्त हैं कि वे राम की टेर पर ध्यान ही नहीं दे पायीं। राम को अपनी यह उपेक्षा और वह भी माता के द्वारा? बहुत खली। कुपित राम रसोई में घुस गये और डण्डे से दूध-दही के सभी भाँडे तोड़-फोड़ डाले। दूध, दही, मक्खन सब मणिमय फर्श पर बह चला, दासियाँ कौसल्या को खबर करती हैं, कौसल्या राम को पकड़ने को दौड़ती हैं। राम भाग चले। दूध दही फैले मणिमय फर्श पर चिकनाई के कारण फिसलने के भय से कौसल्या सम्भल-सम्भल कर आगे बढ़ रही हैं। माता के चेहरे पर नाराजगी है। पकड़े जाने पर मैं जरूर पिटूँगी, इसकी कल्पना मात्र से भगवान ठिठक कर रोने लगते हैं। हाय! बेटे की आँखों से आँसू? माता का अमर्ष जाने कहाँ बिला गया! वह करुणामयी राम को गोद में बिठाकर फुसलाने लगीं।

अध्यात्म रामायणकार को कृतज्ञतापूर्वक नमन करता हूँ, जिसने राम के इस रूप का न केवल स्वयं साक्षात्कार किया वरन् उसे हमें भी दिखला दिया।

“भोजन करत बुलावत राजा, नहिं आवत तजि बाल समाजा। धूसर धूरि भरे तन आये, भूपति बिहसि गोद बैठाये। भोजन करत चपल चित इत उत अवसर पाय, भाजि चले किलकत बदन दधि ओदन लपटाय।” कहा जाता है कि धनु और शतरूपा ही इस जन्म में दशरथ और कौसल्या के रूप में जन्मे थे और उन्हें उनकी तपस्या का यह सुफल मिल रहा था, परन्तु मुझे लगता है कोई भी तपस्या इस सौभाग्य को पाने के लिए अपर्याप्त है। यह तो केवल प्रेमवश मेरा राम अनुग्रह करता है।

राम हैं कि बार-बार भरत से खेल में जानबूझ कर हारते हैं, उन्हें जिताते हैं। भरत स्पष्टतः इसे समझ रहे हैं। भैया की इस बन्धु, वत्सलता से उनका कृतज्ञ मन आर्द्र हो जाता है।

एक अजब मदारी आया है, उसके साथ एक अजब बन्दर भी है, वह खूब तमाशा दिखलाता है। राम उस बन्दर को लेने के लिए मचल गये। नाही नहीं का पर्याप्त अभिनय करने के उपरान्त मदारी इस शर्त पर वह बन्दर राम को देता है कि वह नित्य प्रति अपने बन्दर को देखने के लिए आयेगा। राम जिस प्रेम का पियारा है उसी प्रेम के अधीन स्वयं भूत भावन भगवान् शङ्कर मदारी बनकर और हनुमान उसके बन्दर के रूप में अयोध्या की वीथियों में रहते रहे।

ऋष्यमूक पर्वत की छाँव में विप्र रूप धरे हनुमान ने राम-लक्ष्मण का परिचय पूछा, अपना परिचय देकर राम ने हनुमान का परिचय पूछा।

हनुमान माख मान गये, ‘मोर न्याय मैं पूछा साँई, तुम कस पूछेव नर की नाई।’ तब राम ने उन्हें ‘तै मोहि प्रिय लछिमन ते दूना’ कह प्रबोध दिया। मेरे मन में आया कि इस अवसर पर कहीं लछिमन जी माख मान कर तुनक पड़ते, यह क्या बात हुई सभी आपको लछिमन से दूना प्यारा हो जाता है मुझे बटखरा बना रक्खा है। तो बड़ा मजा आया पर यह क्या असमिया रामकथा में सचमुच लक्ष्मण जी बुरा मान गये, फिर क्या था। राम एक बाँह में लक्ष्मण को दूसरी में हनुमान को भरकर बोले, तुम्हीं बतलाओ अपने दोनों नेत्रों में से किसे मैं अपने लिए अधिक प्रिय बतलाऊँ।

राजर्षि विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को माँगने आये। दशरथ कातर हो आये! परन्तु गुरु वशिष्ठ के कहने पर वे राम-लक्ष्मण को विश्वामित्र के साथ कर देते हैं। वहाँ निशाचरों से उनके यज्ञ की रक्षा करने के उपरान्त राम मिथिला की ओर उन्मुख हुए। अहल्या उद्धार के पश्चात् वे मिथिला में लक्ष्मण का नाम लेकर कौशिक से नगर विलोकन की अनुमति माँगते हैं। इस शील का निर्वाह केवल प्रेमव्रती राम से ही सम्भव था। फुलवारी प्रसङ्ग में भगवान राम का अत्यन्त भुवनविमोहन स्वरूप उजागर होता है।

राम बनवास प्रसङ्ग जितना मार्मिक है उतना ही प्रीतिपुलक से भरपूर है। वह चाहे सीता का साथ ही वन जाने का आग्रह हो, लक्ष्मण का आग्रह हो, दशरथ की कायरता हो, कौसल्या का विलाप हो, सुमित्रा का उदात्त मातृत्व हो, मन्त्री सुमन्त्र की विह्वलता हो और चाहे अयोध्याके पुरजन-परिजन हों।

क्रमशः.....

भगवान् के वरदान हैं जगद्गुरु रामभद्राचार्य

□ मा० राजनाथ सिंह

भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष एवं सांसद मा० राजनाथ सिंह ने गाजियाबाद में समायोजित रामकथा में मुख्य अतिथि के रूप में कहा- पूज्य जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज विश्व की ऐसी अक्षुण्ण धरोहर हैं जिनकी सभी रामभक्तों और राष्ट्रभक्तों को सेवा करनी चाहिए। इनके संकल्पों को साकार करने में सहयोग करना चाहिए। इनके द्वारा की जा रही विकलांग सेवा में तनमनधन से जुटना होगा। किसी जन्म के ये महर्षि हैं इन्होंने भगवान् से वरदान मांगा होगा कि प्रभो! मुझे अपने हृदय स्थान भारत में जन्म दें तथा चर्मचक्षु न देकर अन्तर्चक्षु प्रदान करें जिनसे मैं आपको, शास्त्रों को और आपके जगत की सेवा करके आपके प्रेम की महिमा समझा सकूँ। मा० राजनाथ सिंह जी ने कहा कि मैं भौतिक विज्ञान का व्यक्ति सामान्य रूप से किसी सन्त अथवा सेवक की प्रशंसा नहीं करता, अच्छी प्रकार जब परख लेता हूँ और उनके अन्दर मानवता की निरपेक्ष सेवा साकार होती देख लेता हूँ तभी किसी के प्रति नतमस्तक होता हूँ। इसी आधार से मैंने जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज में मानवता के प्रति प्रेम, विकलांग के प्रति अनूठी निष्ठा एवं सेवा, भारतीय तत्त्वचिन्तन की गहराइयाँ, रामभक्ति की पराकाष्ठा आदि सद्गुण निहारकर इनको अपना पूज्य माना है और इनके विकलांग सेवाव्रत को नमन किया है। मा० राजनाथ

सिंह जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज के ६१वें जन्मदिवस के पश्चात् गाजियाबाद में समायोजित 'अद्भुत रामकथा' में 'षष्टिपूर्ति' अभिनन्दन ग्रन्थ के लोकार्पण समारोह में भाषण कर रहे थे। इस अवसर पर पूज्य जगद्गुरु जी ने भी मुख्य अतिथि मा० राजनाथ सिंह को अपने आशीर्वाद प्रदान करते हुए कहा- "विकलांग विश्वविद्यालय चित्रकूट के निर्माण में राजनाथ सिंह जी की बहुत अहम् भूमिका रही है। ये भारतीय राजनीति में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। हम सब भगवान् से प्रार्थना करें कि एक दिन राजनाथ सिंह भारत के प्रधानमन्त्री बनें।"

स्मरण रहे कि श्रीतुलसीमण्डल (पंजी०) गाजियाबाद ने इस षष्टिपूर्ति ग्रन्थ का प्रकाशन किया है। इस ग्रन्थ में सन् २००० से १४ जनवरी २०१० तक के पूरे दशक की उपलब्धियों का विस्तृत विवरण है। सम्पूर्ण हिन्दू समाज की ओर से मा० राजनाथ सिंह ने षष्टिपूर्ति अभिनन्दन ग्रन्थ पूज्यपाद जगद्गुरु जी के करकमलों में समर्पित किया।

मंच संचालक- डॉ० सुरेन्द्र शर्मा 'सुशील' ने कहा-मा० राजनाथ सिंह के हम आभारी हैं जिन्होंने राष्ट्र और धर्म की महाविभूति स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज की संकल्पना को साकार करने में भरपूर योगदान किया है। इस अवसर पर गाजियाबाद में अपार जनसमूह ने पूज्य जगद्गुरु जी को बधाइयाँ प्रदान कीं। □□□

पूज्यपाद जगद्गुरु जी के आगामी कार्यक्रम

□ प्रस्तुति-पूज्या बुआ जी

| दिनांक | विषय | आयोजक तथा स्थान |
|--------------------------------------|--------------------|---|
| ७ फरवरी २०११ से १३ फरवरी २०११ तक | श्रीमद्भागवतकथा | कोटला कलां ऊना (हि०प्र०) |
| १५ फरवरी २०११ से १९ फरवरी २०११ तक | सन्त सम्मेलन | बेतिया, पश्चिमी चम्पारण (बिहार) |
| २५ फरवरी २०११ से ४ मार्च २०११ तक | श्रीमद्भागवतकथा | श्री नारदाश्रम, नैमिषारण्य सीतापुर (उ०प्र०) |
| ८ मार्च २०११ से १४ मार्च २०११ तक | श्रीमद्भागवतकथा | नागपुर (महाराष्ट्र) |
| २४ मार्च २०११ से १ अप्रैल २०११ तक | श्रीवाल्मीकिरामायण | मोतीझील, कानपुर |

ज्ञातव्य है कि गाजियाबाद में आयोजित हो चुकी 'अद्भुत रामकथा' जिसका विषय था- "श्रीमानस में मर्यादा" का दो टी०वी० चैनलों पर प्रसारण इस प्रकार होगा-

- 'सनातन' टी०वी० चैनल (डिस टी०वी०) पर १५ फरवरी २०११ से सायं ४ से ७ बजे तक।
- 'धर्म' टी०वी० चैनल (केबल टी०वी०) पर ६ फरवरी २०११ से दोपहर बाद २ से ४ बजे तक।

इच्छुक सज्जन रामकथा देख सकते हैं।

-श्रीराघवपरिवार

व्रतोत्सवतिथिनिर्णयपत्रक
माघ शुक्ल पक्ष/सूर्य उत्तरायण, शिशिर ऋतु

| तिथि | वार | नक्षत्र | दिनांक | व्रत पर्व आदि विवरण |
|----------|----------|--------------|----------|---|
| प्रतिपदा | शुक्रवार | घनिष्ठा | 4 फरवरी | चन्द्रदर्शन |
| द्वितीया | शनिवार | शतभिषा | 5 फरवरी | — |
| तृतीया | रविवार | पू०भा० | 6 फरवरी | श्रीगणेश चतुर्थी व्रत |
| चतुर्थी | सोमवार | उ०भा० | 7 फरवरी | — |
| पंचमी | मंगलवार | रेवती | 8 फरवरी | पंचक प्रातः 4/53 तक, बसन्त पंचमी श्रीसरस्वती पूजन |
| षष्ठी | बुधवार | अश्विनी | 9 फरवरी | — |
| सप्तमी | गुरुवार | अश्विनी | 10 फरवरी | — |
| अष्टमी | शुक्रवार | भरणी | 11 फरवरी | श्रीदुर्गाष्टमी व्रत |
| नवमी | शनिवार | कृतिका | 12 फरवरी | — |
| दशमी | रविवार | रोहिणी | 13 फरवरी | कुम्भ में सूर्य फाल्गुन संक्रान्ति |
| एकादशी | सोमवार | मृगशिरा | 14 फरवरी | जया एकादशी व्रत (सबका) |
| द्वादशी | मंगलवार | आर्द्रा | 15 फरवरी | भीष्म द्वादशी |
| त्रयोदशी | बुधवार | पुनर्वसु | 16 फरवरी | प्रदोष व्रत |
| चतुर्दशी | गुरुवार | पुष्य/श्लेषा | 17 फरवरी | श्रीसत्यनारायण व्रत |
| पूर्णिमा | शुक्रवार | मघा | 18 फरवरी | माघी पूर्णिमा, स्नानदान की पूर्णिमा |

फाल्गुन कृष्ण पक्ष/सूर्य उत्तरायण, शिशिर/बसन्त ऋतु

| तिथि | वार | नक्षत्र | दिनांक | व्रत पर्व आदि विवरण |
|----------|----------|----------|----------|---------------------------------|
| प्रतिपदा | शनिवार | पू०फा० | 19 फरवरी | — |
| द्वितीया | शनिवार | — | — | द्वितीया तिथि का क्षय |
| तृतीया | रविवार | उ०फा० | 20 फरवरी | — |
| चतुर्थी | सोमवार | हस्त | 21 फरवरी | श्रीगणेश चतुर्थी व्रत |
| पंचमी | मंगलवार | चित्रा | 22 फरवरी | — |
| षष्ठी | बुधवार | स्वाति | 23 फरवरी | — |
| सप्तमी | गुरुवार | विशाखा | 24 फरवरी | श्रीदुर्गाष्टमी व्रत |
| अष्टमी | शुक्रवार | अनुराधा | 25 फरवरी | — |
| नवमी | शनिवार | ज्येष्ठा | 26 फरवरी | — |
| दशमी | रविवार | मूल | 27 फरवरी | — |
| एकादशी | सोमवार | पू०षा० | 28 फरवरी | विजया एकादशी व्रत (सबका) |
| द्वादशी | मंगलवार | उ०षा० | 1 मार्च | — |
| त्रयोदशी | बुधवार | श्रवण | 2 मार्च | प्रदोष व्रत, महाशिवरात्रि व्रत |
| चतुर्दशी | गुरुवार | घनिष्ठा | 3 मार्च | पंचक प्रातः 10/21 से प्रारम्भ |
| अमावस्या | शुक्रवार | शतभिषा | 4 मार्च | देवपितृ कार्य अमावस्या |

रामहिं केवल प्रेम पियारा

□ श्री उमाकान्त मालवीय

केवट के प्रेम ने तो उन्हें जैसे खरीद ही लिया है। उसके प्रेम लपेटे अटपटे बैन राम-लक्ष्मण-सीता सभी को मोह लेते हैं। चित्रकूट में राम को मनाने के लिए भरत जाते हैं। भरत के प्रेम में रसे बसे राम ने निर्णय भरत पर ही छोड़ दिया। देवता भरत को मनाने लगे राम वन गमन का उद्देश्य ही पराजित न हो जाय। 'प्रेम पियारा राम' यह जोखिम बार-बार उठाते हैं। वे बालि को धराशायी करने के बाद उससे पुनः जीवन दान का प्रस्ताव करते हैं। सुग्रीव काँप उठा, बालि ने भी कच्ची गोलियाँ नहीं खेली थीं। वह इस दुर्लभ सौभाग्य से वञ्चित नहीं होना चाहता था। 'कोटि-कोटि मुनि जतन' करने के उपरान्त भी अन्त में राम का नाम भी नहीं ले पाते। वही करुणावतार प्रेममूर्ति राम उनके सामने खड़े हैं। दर्शन से उनके नेत्र अघाते नहीं हैं। वे सुलोचना और मन्दोदरी की करुण स्थिति देखकर मेघनाद और रावण को पुनः जीवनदान देकर एक सहस्र वर्ष आयु देने का प्रस्ताव करते हैं। यह प्रस्ताव केवल राम ही कर सकते थे। राम, जो प्रेम है। प्रेम, जो राम है।

वह मारीच, जो प्रिया सीताहरण में माध्यम बना, उसने भी 'प्राण तजत प्रगटेसि निज देहा, सुमरेसि राम समेत सनेहा' और 'अन्तर प्रेम तासु पहचाना, मुनि दुर्लभ गति दीन सुजाना' यह अन्तर प्रेम और उसकी पहचान केवल उसी के पास सम्भव है जो 'केवल प्रेम पियारा' है। अपना दुःख भूलकर जटायु को अङ्क में लेकर उसकी विधिवत् अन्त्येष्टि सम्पन्न करना करुणावतार राम का ही कार्य है। इसके पूर्व शूर्पणखा और राज्यारोहण के उपरान्त वारांगना

राजनर्तकी पिंगला तक को लीलापुरुषोत्तम कृष्णावतार में उनकी इच्छा को पूर्ण करने का अश्वासन दिया।

सती सीता का रूप धर उनकी परीक्षा लेती हैं। राम वहाँ सती को प्रणाम करते हैं। तथापि वे 'तुम देखी सीता मृगनैनी अथवा प्रियाहीन डरपत मन मोरा' कथन से अपना प्यार प्रकट करते हैं। हनुमान के माध्यम से वे जो सन्देश सीता को भिजवाते हैं, उससे सीता के प्रति उनके अनूठे प्रेम का रूप ही प्रतिभासित होता है।

वह केवल छः वर्ष की थी, उसका विवाह होने को है। समारोह जैसा वातावरण उसे खूब भला लग रहा है, परन्तु यह क्या? यह इतने ढेर सारे पशु एकत्र किये गये? तू भील सरदार की बेटी है ना? पर पशु तेरे विवाह के अवसर पर बलि किये जायेंगे। यह सूचना पाते ही बालिका का कोमल मन चीत्कार कर उठा वह चुपचाप घर से भाग निकली। नहीं चाहिए मुझे ऐसा विवाह, नहीं चाहिए ऐसा समारोह। एक नहीं सी बालिका मुनि सुतीक्ष्ण के समक्ष खड़ी है। ऋषि ने पूछा और उसने सारी कैफियत बयान कर दी। करुणा प्रेरित ऋषि ने कहा, 'तू यहीं रह जब रामावतार होगा वे तुझे दर्शन देने यहीं आयेंगे' बस बालिका ने बात गाँठ बाँध ली और प्रारम्भ हुई उसकी एक सुदीर्घ प्रतीक्षा यात्रा। नित्य सूर्योदय के साथ एक प्रतीक्षा उगती और सूर्यास्त के साथ अस्त हो जाती, वह प्रतीक्षा करती-करती बूढ़ी हो चली। परन्तु उसकी प्रतीक्षा नित्य युवा रही। वह थकी नहीं, वह हारी नहीं। निदान एक दिन राम आये। वह अपने राम को चख-चख कर मीठे बेर देती है। राम उसे सराह-सराह कर खाते हैं। उसकी प्रतीक्षा

फलवती हुई।

ऋषि सुतीक्ष्ण पम्पासर को दिखलाकर कहते हैं 'यह सरोवर कितना सुन्दर है, हे राम! परन्तु इसमें कीड़े पड़ गये हैं। इसके जल का कोई उपयोग नहीं हो पाता।' राम छूटते ही पूछते हैं, "क्या शबरी को इसमें स्नान के लिए मना किया गया था?" अन्त्यजा होने के कारण उसका स्नान इसमें वर्जित है। "इसी कारण इसमें कीड़े पड़ गये हैं, उसे सादर आमन्त्रित किया जाय और उसके चरण स्पर्श से ही जल शुद्ध हो जायगा।" राम के कथनानुसार उसे सादर बुलाया गया। उसने ज्यों ही जल में पाँव रखा सरोवर एकदम स्वच्छ और निर्मल हो गया।

घृणा के सौदागर महज 'ढोल, गँवार, शूद्र, पशु-नारी' ही देख पाते हैं, उन्हें केवल शम्बूक वध ही सूझता है। मैं यह नहीं कहता कि इनको नहीं कहा जाना चाहिए, मगर तस्वीर एकांगी न हो इसलिए केवट और शबरी जैसे प्रसंगों को मिलाकर बात कही जानी चाहिए। बात पूरे जोर से कही जानी चाहिए।

मूर्छित लक्ष्मण को राम इस तरह अङ्क में लपेटे हुए हैं जैसे कोई सिंहनी अपने आहत शावक को गोद में लिये बैठी हो। शत्रु शरों से उनकी पीठ छलनी हो गयी है, परन्तु राम को तो लक्ष्मण चाहिए। आदि कवि ने यह छवि कैसे देखी होगी, उसे कैसे शब्दबद्ध किया होगा, अकल्पनीय अनिवर्चनीय लगता है सब कुछ।

मृत रावण की सादर अन्त्येष्टि किये जाने का आदेश भी राम ही देते हैं। पुष्पक यान से लौटते हुए राम सीता को क्रमशः वे सारे स्थान दिखलाते हैं जहाँ उन्होंने सीता की अनुपस्थिति में समय यापन किया था, "यहाँ तुम्हारे नूपुर का एक घुँघरू मिला था, जो अकेला होने के कारण नीरव था।" यह

कहते हुए राम ने प्रिया ने ओर देखा, उसकी आँखों में भी एक घुँघरू के वजन का एक बिन्दु अश्रु टँगा हुआ था परन्तु अकेला होने के कारण क्या वह भी नीरस था?

भरत और राम का मिलन अपूर्व है। एक दूसरे के कन्धे परस्पर आँसुओं से भीग रहे हैं। सुग्रीव और विभीषण इसलिए रो रहे थे कि वे तो बन्धु-घाती हैं, उन्हें यह सुख सम्भव नहीं है। अपने राज्याभिषेक के पूर्व वे स्वयं भरत को स्नान कराते हैं! अभी अपने माथ पर जटाजूट हैं परन्तु भरत की जटा-जूट बिखरा कर खोलते हुए, उनके प्राण क्रन्दन कर उठे। यह माथ तो मुकुट के लिए है इस पर जटाजूट?

केवट घर जाने की आज्ञा माँगता है, माता कौसल्या कहती हैं- "घर जाना? कैसा घर जाना? पाँचों भाई मिलकर राज करो।" केवट निहाल होकर माता के चरणों से लिपट गया। राम माँ के उत्तर से हर्ष विभोर हो गये। आखिर वह उनकी अपनी माँ है, क्यों न होती ऐसी ममता वात्सल्यमयी अनुपम उदार।

प्रेम तेरा यह भाग्य कैसा है? प्राणप्रिया ने धरती समाधि ले ली, प्राण बन्धु लक्ष्मण को त्यागना पड़ा? मेरा तो ईश्वरत्व ही छीज गया, यह कहते हुए मेरे राम को लीला सम्बरण करना पड़ा। कहाँ तक, कब तक बखानूँ राम तुम्हारे प्रेम को? पोर-पोर में राग पिराता, अरसे से अनवरत कह रहा पर इतना है जो न सिराता। मैं मुक्ति नहीं चाहता मेरे राम! बड़े मुँह छोटी बात तो रोज ही सुनता हूँ परन्तु हे राम! मुझे अनुमति दो अपने तुलसी के सहारे से छोटे मुँह एक बड़ी बात कह सकूँ-

अर्थ न धर्म न काम रुचि गति न चहाँ निर्वान।

जनम जनम रति राम पद, यह वरदान न आन।।

□□□

पूज्यपाद जगद्गुरु जी के आगामी कार्यक्रम

□ प्रस्तुति-पूज्या बुआ जी

| दिनाङ्क | विषय | आयोजक तथा स्थान |
|--|--------------------|---|
| ७ फरवरी २०११ से १३ फरवरी २०११ तक | श्रीमद्भागवतकथा | कोटला कलां ऊना (हि०प्र०) |
| १५ फरवरी २०११ से १९ फरवरी २०११ तक | सन्त सम्मेलन | बेतिया, पश्चिमी चम्पारण (बिहार) |
| २५ फरवरी २०११ से ४ मार्च २०११ तक | श्रीमद्भागवतकथा | श्री नारदाश्रम, नैमिषारण्य सीतापुर (उ०प्र०) |
| ८ मार्च २०११ से १४ मार्च २०११ तक | श्रीमद्भागवतकथा | नागपुर (महाराष्ट्र) |
| २४ मार्च २०११ से १ अप्रैल २०११ तक | श्रीवाल्मीकिरामायण | मोतीझील, कानपुर |
| ४ अप्रैल २०११ से १२ अप्रैल २०११ तक | श्रीरामकथा | श्रीतुलसीपीठ चित्रकूट |
| १४ अप्रैल २०११ से २२ अप्रैल २०११ तक | श्रीरामकथा | रामहनुमान बाग, रामलीला मैदान, अजमेरी गेट, आसफअली रोड़, नई दिल्ली |
| २४ अप्रैल २०११ से २ मई २०११ तक | श्रीरामकथा | हवाई अड्डे के पास, इन्दौर (म०प्र०) |